पाठ का नाम : कर्मभूमि, प्रेमचंद
हिंदी (ऑनर्स)
द्वितीय वर्ष
सेमेस्टर – IV
प्रश्नपत्र - 12 (हिंदी उपन्यास)

लेखक : डॉ. विजय कुमार मिश्र
सहायक प्रोफेसर (तदर्थ)
हिंदी विभाग
हंसराज महाविद्यालय
दिल्ली विश्वविद्यालय
09891417959
vijayvijaymishra@gmail.com

विषय प्रवेश
प्रेमचंद : व्यक्तित्व और कृतित्व
उपन्यासकार प्रेमचंद
कर्मभूमि की तात्विक समीक्षा
कर्मभूमि में समस्या-निरूपण
कर्मभूमि में गांधीवाद
कर्मभूमि के मुख्य चरित्र
अमरकांत
समरकान्त
सुखदा
सलीम
अन्य चरित्र
स्व-मूल्यांकन प्रश्नमाला
सन्दर्भ-सूची

विषय प्रवेश

प्रेमचंद : व्यक्तित्व और कृतित्व

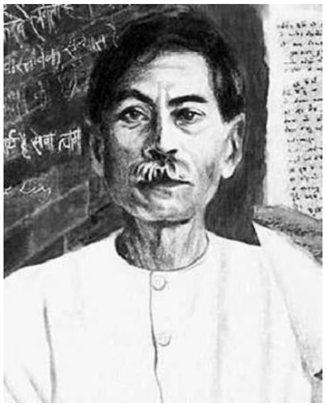

प्रेमचंद

चित्र : साभार http://upload.wikimedia.org/wikipedia/commons/2/26/Premchand_4_a.jpg

कलम के सिपाही मुंशी प्रेमचंद का जन्म 31 जुलाई 1980 में उत्तरप्रदेश के वाराणसी के पास लमही नामक गाँव में हुआ था। उनके बचपन का नाम धनपत राय था जो बाद में नवाबराय और प्रेमचंद के नाम से भी जाने गए। उनकी माता का नाम आनंदी देवी तथा पिता का नाम मुंशी अजयाबराय था। प्रेमचंद का बचपन अत्यंत ही अभाव और पीड़ा में व्यतीत हुआ। जब प्रेमचंद का जन्म हुआ तब पिता की तनख्वाह बीस रुपये थी। जब उनकी उम्र सात साल थी, तभी उनकी माता का स्वर्गवास हो गया। पंद्रह साल की आयु में उनकी शादी कर दी गयी। सोलह साल के उम्र में ही उनके माथे से पिता का साया भी उठ गया। जाहिर है इस उम्र में ही उन पर घर की जिम्मेदारी आ गयी। उस वक्त वे नौवें दर्जे में ही थे जब दो सौतेले भाई, उनकी माँ, उनकी पत्नी से युक्त परिवार को संभालने का दायित्व उन पर आ गया। सौतेली माँ का व्यवहार भी उनके प्रति स्नेहयुक्त न था। पहली पत्नी की मृत्यु के पश्चात् 1906 में दूसरा विवाह अपनी प्रगतिशील परंपरा के अनुरूप बाल-विधवा शिवरानी देवी से किया। 1898 में मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण करने के बाद वे एक स्थानीय विद्यालय में शिक्षक नियुक्त हो गए। नौकरी के साथ ही उन्होंने पढ़ाई जारी रखी। 1910 में उन्होंने इंटर पास किया और 1919 में बी.ए. पास करने के बाद शिक्षा विभाग के इंस्पेक्टर पद पर नियुक्त हुए।

प्रेमचंद ने अपने लेखन का प्रारंभ उर्दू से किया। सन 1900 के आसपास उन्होंने उर्दू में तीन उपन्यासों **'हमखुर्मा व हमसवाब'**, **'किशना'** और **'असरारे मआविद'** की रचना की थी। प्रेमचंद ने उर्दू में **'रूठी रानी'** और **'जलवाए ईसार'** नामक उपन्यास भी लिखा। **'जलवाए ईसार'** ही 1921 में हिन्दी में **'वरदान'** शीर्षक से प्रकाशित हुआ।

प्रेमचंद के उपन्यास लेखन का उत्कर्षकाल 1918 ई. में **'सेवासदन'** के प्रकाशन से आरम्भ होता है। सेवासदन की रचना मूलतः **'बाजारे हुस्न'** शीर्षक से 1917 में हुई थी, पर उर्दू में प्रकाशक की कमी के कारण बाद में निराश होकर प्रेमचंद ने इसे हिन्दी में हिंदी पुस्तक एजेंसी, कलकत्ता से प्रकाशित किया। **'सेवासदन'** के बाद प्रेमचंद के कुल आठ उपन्यास हिन्दी में प्रकाशित हुए जिनमें प्रारंभिक दो उपन्यास भी पहले उर्दू में लिखे गए थे। उनके द्वारा हिंदी में लिखा गया पहला उपन्यास 'कायाकल्प' था। उसके बाद उन्होंने अपने सभी उपन्यास मूलतः हिंदी में लिखे। हिंदी में प्रकाशित उनके उपन्यास हैं –

1. सेवासदन (1918)
2. प्रेमाश्रम (1922)
3. रंगभूमि (1925)
4. कायाकल्प (1926)
5. निर्मला (1927)
6. प्रतिज्ञा (1929)
7. गबन (1931)
8. कर्मभूमि (1932)
9. गोदान (1936)
10. मंगलसूत्र (अपूर्ण)

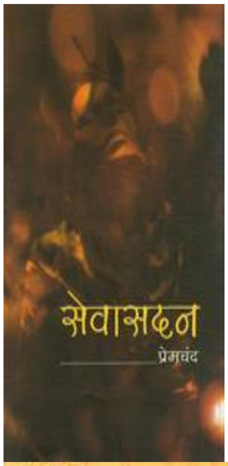

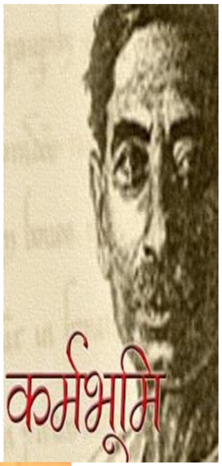

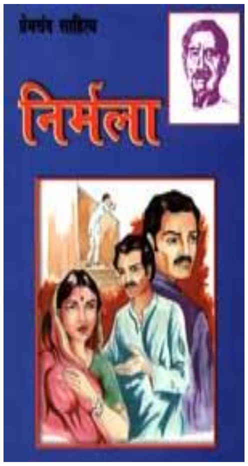

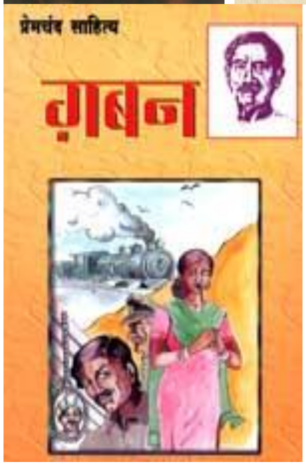

आधुनिक हिन्दी कहानी और उपन्यास के क्षेत्र में प्रेमचंद का योगदान युगप्रवर्तक रचनाकार का है। उनसे पहले हिंदी में काल्पनिक, एय्यारी और पौराणिक धार्मिक रचनाएं ही की जाती थीं। प्रेमचंद ने हिंदी में यथार्थवाद की शुरूआत की। भारतीय साहित्य का बहुत सा विमर्श जो बाद में प्रमुखता से उभरा चाहे वह दलित साहित्य का हो या स्त्री साहित्य का, उसकी जड़ें कहीं गहरे प्रेमचंद के

साहित्य में दिखाई देती हैं। प्रेमचंद का पहला कहानी संग्रह **'सोजे वतन'** नाम से 1908 में प्रकाशित हुआ। देशभक्ति की भावना से ओतप्रोत होने के कारण इस पर अंग्रेज़ी सरकार ने रोक लगा दी और प्रेमचंद को भविष्य में इस तरह का लेखन न करने की चेतावनी दी। इसके कारण उन्हें नाम बदलकर लिखना पड़ा। **'प्रेमचंद'** नाम से उनकी पहली कहानी ***'बड़े घर की बेटी'*** ज़माना पत्रिका के दिसम्बर 1910 के अंक में प्रकाशित हुई। मरणोपरांत उनकी कहानियाँ **'मानसरोवर'** नाम से 8 खंडों में प्रकाशित हुई। 1921 में उन्होंने महात्मा गांधी के आह्वान पर अपनी नौकरी छोड़ दी। कुछ महीने **'मर्यादा'** पत्रिका का संपादन भार संभाला, छह साल तक **'माधुरी'** नामक पत्रिका का संपादन किया, 1930 में बनारस से अपना मासिक पत्र ***'हंस'*** शुरू किया और 1932 के आरंभ में जागरण नामक एक साप्ताहिक और निकाला। उन्होंने लखनऊ में 1936 में **'अखिल भारतीय प्रगतिशील लेखक संघ'** के सम्मेलन की अध्यक्षता की। उन्होंने कुछ समय तक मुम्बई में फिल्म लेखन के क्षेत्र में भी काम किया मगर यह उन्हें रास नहीं आया। प्रेमचंद ने कुल करीब तीन सौ कहानियां, लगभग एक दर्जन उपन्यास और कई लेख लिखे। उन्होंने कुछ नाटक, बाल-पुस्तकें तथा हजारों पृष्ठों के लेख, सम्पादकीय, भाषण, भूमिका, पत्र आदि भी लिखे और कुछ अनुवाद कार्य भी किया। प्रेमचंद की कई साहित्यिक कृतियों का अंग्रेजी, रूसी, जर्मन सहित अनेक भाषाओं में अनुवाद हुआ। गोदान उनकी कालजयी रचना है। कफन उनकी अंतिम कहानी मानी जाती है। अपने तीन-चार दशक के रचनात्मक जीवन में उन्होंने हिंदी साहित्य जगत में मात्रात्मक और गुणात्मक रूप से इतना कुछ योगदान दिया जिसकी समानता कोई और नहीं कर सकता।

क्या आप जानते हैं ?

प्रेमचंद ने अपने लेखन की शुरुआत उर्दू में की। उनका पहला उर्दू उपन्यास 'असरारे मआबिद' उर्दू साप्ताहिक 'आवाज-ए-खल्क़' में 1903 से 1905 तक धारावाहिक रूप में प्रकाशित हुआ। उनका दूसरा उपन्यास 'हमखुर्मा व हमसवाब' था जिसका हिंदी रूपांतरण 'प्रेमा' नाम से 1907 में प्रकाशित हुआ। उन्होंने 'सेवासदन' (1918) उपन्यास से हिंदी उपन्यास की दुनिया में प्रवेश किया जोकि मूल रूप से 'बाजारे-हुस्न' नाम से पहले उर्दू में लिखा गया लेकिन उर्दू में प्रकाशकों की कमी के कारण इसका हिंदी रूप 'सेवासदन' पहले प्रकाशित हुआ।

'कर्मभूमि' की तात्विक समीक्षा

कर्मभूमि प्रेमचंद का प्रमुख सामाजिक उपन्यास है। इस उपन्यास में प्रेमचंद की उपन्यास-कला के वैशिष्ट्य का दर्शन होता है। कोई भी विधा एक विकसित कला कुसुम की भांति है, अतः उसको उसकी समग्रता में समझने के लिए उसके सभी तत्वों को एक साथ देखने की आवश्यकता होती है। आलोचकों ने उपन्यास के प्रमुख छः तत्त्व स्वीकार किए हैं-

कथावस्तु

किसी भी उपन्यास में कथावस्तु का महत्त्वपूर्ण स्थान रहता है। संपूर्ण उपन्यास की कहानी जिन उपकरणों से मिलकर बनती है वे कथावस्तु कहलाते हैं। यह उपन्यास की आधारभूत सामग्री है जो लेखक अपनी आवश्यकता के अनुसार विस्तृत जीवन क्षेत्र से चुनता है। लेखक जीवन के ऐसे मार्मिक और रोचक प्रसंगों, घटनाओं एवं परिस्थितियों का चयन करता है जो रुचिकर और प्रेरणाप्रद हो। यथार्थ जीवन से कथावस्तु को चुने जाने के कारण उपन्यासकार इस बात का ध्यान रखता है कि वह कपोलकल्पित न लगे तथा उसमें विश्वसनीयता और प्रामाणिकता का तत्त्व मौजूद हो। कथा-प्रसंग चयन के बाद लेखक को इस बात का भी ध्यान रखना होता है कि वह अपनी कथा-सामग्री को क्रमबद्ध, सुसंबद्ध रूप में सुनियोजित करे। कथा में उत्सुकता और जिज्ञासा की भी अपेक्षा होती है। उपन्यास में मुख्य कथा के साथ-साथ अवांतर (प्रासंगिक अथवा गौण) कथा की भी योजना की जाती है। प्रासंगिक कथाएँ मुख्य कथा से जितना अधिक सम्बद्ध हो, उपन्यास की सफलता की संभावना उतनी ही अधिक होती है।

'कर्मभूमि' में लाला समरकान्त, अमरकांत व सुखदा से सम्बंधित घटनाएं मुख्य कथा के अंतर्गत आती हैं और सकीना, सलीम, डॉ. शांति कुमार, रेणुका देवी, मुन्नी भिखारिन के प्रसंग आदि को गौण कथा के अतर्गत रखा जा सकता है। इस उपन्यास में मुख्य कथा और गौण कथा में खास प्रकार की तारतम्यता है और ये एक दूसरे की पूरक बनकर प्रभाव में वृद्धि करने का कार्य करते हैं। इस उपन्यास

में प्रेमचंद ने आदर्शोन्मुखी यथार्थवादी शैली को अपनाया है। इसका अभिप्राय यह है कि उन्होंने प्रारंभ में तो पात्रों के अवगुणों को भी दिखाया है, जो कि स्वाभाविक भी है, किन्तु कथा के अंत तक पहुँचते-पहुँचते सभी पात्रों को आदर्श मार्ग पर मोड़ लिया है।

कर्मभूमि की कथा में भारतवर्ष के स्वाधीनता आन्दोलन की कहानी के अंश को भी बड़े ही कौशलपूर्ण ढंग से प्रस्तुत किया गया है। इस उपन्यास की कथा जहाँ राजनीति, समाज, धर्म एवं शिक्षा के विशाल-क्षेत्र का चित्र प्रस्तुत करती है, वहां यथार्थ की भूमि पर चित्रित हुई ये घटनाएं उनको सूत्र-बद्ध करने की क्षमता से युक्त भी हैं। उपन्यास का कलेवर दो अंचल की कथाओं से मिलकर तैयार हुआ है – एक काशी नगर की और दूसरी हरिद्वार के समीपस्थ ग्राम की। दोनों कथाओं के सूत्र अमर के द्वारा जोड़े गए हैं। नगर की कथा अछूतोद्धार एवं मजदूरों की आवासीय व्यवस्था से सम्बंधित है। गोदान की तरह यहाँ नगर और ग्राम की कथा अलग-अलग नहीं प्रतीत होती है।

उपन्यास में कथा की रोचकता का खास महत्व है। प्रेमचंद ने **'कर्मभूमि'** में घटनाओं की विविधतापूर्ण ढंग से योजना की है, जिससे कथा में रोचकता बनी रही है। इस दृष्टि से सलीम-सकीना का प्रेम प्रसंग, अमरकांत-समरकान्त का वैचारिक धरातल पर वाद-विवाद एवं मतभेद, स्वाधीनता आन्दोलन से सम्बंधित घटनाएं आदि उल्लेखनीय हैं। इसी तरह उपन्यास में स्वाभाविकता की रक्षा के लिए अलौकिक, अतिप्राकृतिक एवं अविश्वसनीय घटनाओं से बचा गया है, हालाँकि संयोग आदि का सहारा भी कहीं-कहीं लिया गया है लेकिन उससे स्वाभाविकता को कोई विशेष आघात नहीं पहुँचता है। कथा में देश-सेवा, अछूतोद्धार, नारी स्वातंत्र्य, बचपन में मातृ-प्रेम से विहीन और पिता की डांट-फटकार से पीड़ित बच्चे का किस प्रकार विकास होता है इन सबका मनोवैज्ञानिक चित्रण आदि प्रसंगों के रोचक वर्णन से कथा में मौलिकता की भी सृष्टि हुई है।

औपन्यासिक कथा में घटनाओं का परस्पर सम्बद्ध होना अनिवार्य है। **'कर्मभूमि'** में विषय का वैविध्य होते हुए भी घटनाएं एक सूत्र में बंधी हुई प्रतीत होती हैं। अमरकांत-समरकान्त के पारिवारिक जीवन, सकीना-अमर के प्रेम तथा अमरकांत, सुखदा, नैना, डॉ. शांतिकुमार, सलीम, मुन्नी, बुढिया पठानिन, काले खां इत्यादि से सम्बंधित विविध प्रसंगों को प्रेमचंद ने बहुत ही कुशलता के साथ संग्रथित किया है जिससे कथा में असंबद्धता का तनिक भी आभास नहीं होता।

चरित्र-चित्रण

उपन्यास के भीतर परिस्थितियों को धारण करने वाला पात्र कहलाता है। पात्र जितने सजीव और यथार्थ होंगे, उपन्यास उतना ही आकर्षक होगा। अतः जहाँ तक संभव हो सके सभी पात्रों का सजीव चरित्र-चित्रण होना चाहिए। पात्रों के कार्यों और विचारों का पाठक के मानस पटल पर दीर्घकालिक प्रभाव पड़ना चाहिए। उपन्यासकार की महानता इसी बात पर निर्भर करती है कि उसके पात्र कितने समय तक पाठक के स्मृति पटल पर अंकित रहते हैं तथा उसकी भावना को किस हद तक प्रभावित करते हैं। वे पात्र जो देशकाल की सीमा पार कर पाठकों के चित्त में स्थायी रूप से बस जाते हैं, अमर पात्र कहलाते हैं। जैसे- हैमलेट, सूरदास, होरी आदि। उपन्यासकार की महानता की एक कसौटी यह भी है कि वह अपनी कृतियों में चरित्र को कितनी विविधता दे सका है, उसके चरित्र-चित्रण की सीमाएं क्या है, उसके पात्रों में कितना विस्तार और कितनी गहराई है। इस प्रकार उपन्यासकार की पात्र सृष्टि स्वाभाविक, यथार्थ, सजीव और मनोवैज्ञानिक होनी चाहिए।

प्रेमचंद ने उपन्यास को मानव-चरित्र का चित्र स्वीकार करते हुए 'उपन्यास' शीर्षक निबंध में लिखा है कि – *"मैं उपन्यास को मानव चरित्र का चित्र मानता हूँ। मानव-चरित्र पर प्रकाश डालना और उसके रहस्यों को खोलना ही उपन्यास का मूल तत्त्व है।"*'कर्मभूमि' में भी प्रेमचंद के अन्य उपन्यासों की भांति मानव-जीवन के विविध रूपों को अंकित किया गया है। यद्यपि प्रेमचंद अपने पात्रों का चयन समाज के प्रायः सभी वर्गों से करते हैं किन्तु मध्यवर्ग के पात्रों के चरित्रांकन पर उनकी दृष्टि विशेष रूप से केन्द्रित रहती है और वे इसी वर्ग के पात्रों को मुख्य पात्र बनाकर कथा-संयोजन करते हैं। **'कर्मभूमि'** उपन्यास में प्रेमचंद ने शहरी और ग्रामीण जीवन की कथा को निरुपित किया है, परन्तु शहरी जीवन का चित्रण मुख्य होने के कारण शहरी जीवन से सम्बद्ध पात्रों का ही अधिक वर्णन हुआ है। **'कर्मभूमि'** के पात्रों में यह विशेषता मुख्य रूप से पाई जाती है कि प्रायः सभी पात्रों का चरित्र यथार्थ के धरातल पर प्रारंभ होकर, उपन्यास के अंत में आदर्शवादी भावनाओं से ओत-प्रोत हो उठता है। अमरकांत मातृ-प्रेम के अभाव में और पिता के कठोर व्यवहार के कारण पत्नी को भी वह प्रेम नहीं दे पाता जो की उससे अपेक्षित है। प्रेम के इस अभाव की पूर्ति के लिए वह सकीना की ओर झुकता है और अंत में वह समाज-कल्याण की भावनाओं से प्रेरित एक आदर्श चरित्र बन जाता है। धन के लोभी लाला समरकान्त एवं विलासिता को ही जीवन का सब-कुछ समझने वाली सुखदा अपना जीवन समाज के उद्धार संबंधी कार्यों में लगा देती है। अन्य पात्रों में भी यही प्रवृत्ति मिलती है।

क्या आप जानते हैं ?

प्रेमचंद ने अपने लेखन का प्रारंभ उर्दू से किया। सन 1900 के आसपास उन्होंने उर्दू में तीन उपन्यासों **'हमखुर्मा व हमसवाब'**, **'किशना'** और **'असरारे मआविद'** की रचना की थी। प्रेमचंद ने उर्दू में **'रूठी रानी'** और **'जलवाए ईसार'** नामक उपन्यास भी लिखा। **'जलवाए ईसार'** ही 1921 में हिन्दी में **'वरदान'** शीर्षक से प्रकाशित हुआ।

'कर्मभूमि' में प्रेमचंद के सभी पात्र निजी विशेषताएं रखते हैं। लाला समरकान्त में कठोरता एवं लोभ की प्रवृत्ति, अमरकांत में स्वाभिमान की प्रवृत्ति, डॉ. शान्तिकुमार में त्याग-भावना, सकीना के हृदय का निश्छल-प्रेम, सलीम में कर्त्तव्य-बोध एवं मानवीयता के विभिन्न गुणों को अनायास देखा जा सकता है। मुन्नी जैसी साधारण भिखारिन स्त्री में भी चारित्रिक विशेषता है। वह अपमान का प्रतिशोध लेने के लिए कठिन-से-कठिन काम करने को भी प्रस्तुत है। प्रेमचंद के अधिकांश पात्र गतिशील पात्र हैं। **'कर्मभूमि'** में जो समरकान्त प्रारंभ में अत्यंत कठोर एवं लोभी व्यक्ति के रूप में चित्रित किये गए हैं, वे समाज की परिस्थितियों से प्रभावित होकर धीरे-धीरे उदार हृदय वाले, त्यागी और गरीबों का साथ देने वाले बन जाते हैं। इसी तरह रईस धनीराम में भी अचानक परिवर्तन आ जाता है और जिस जमीन को बचाने के लिए उन्होंने पुलिस द्वारा गोलियां चलवाई, उसी को वे गरीबों के मकान बनाने के लिए दे देते हैं। परिस्थितियों के उतार-चढ़ाव के कारण ही अमरकांत प्रारंभ में कभी पिता का व्यापार संभालता है कभी विरोध और विद्रोह करता है। इस तरह लगभग सभी पात्रों में मानव चरित्र की सहज शक्ति और दुर्बलताओं पर पर्याप्त प्रकाश डाला गया है।

'कर्मभूमि' में विश्लेषणात्मक और नाटकीय दोनों ही प्रणाली को अपनाया गया है। अमरकांत के चरित्र का चित्रण करते हुए लेखक ने विश्लेषणात्मक प्रणाली का उपयोग कर स्वयं उसपर टीका-टिप्पणी करते हुए लिखा है कि – *"अमरकांत की अवस्था 19 साल से कम न थी; पर देह और बुद्धि का मंद। पौधे को कभी मुक्त प्रकाश नहीं मिला, कैसे बढ़ता, कैसे फैलता। बढ़ने और फ़ैलाने के दिन कुसंगति और असंयम में निकल गए। दस साल पढ़ते हो गए थे और अभी ज्यों त्यों करके आठवें में पहुंचा था, किन्तु विवाह के लिए ये बातें नहीं देखी जातीं।"*

चरित्रांकन की नाटकीय प्रणाली में दो पात्रों की पारस्परिक बातचीत के द्वारा जो विचार व्यक्त होते हैं, उन्हीं से पात्रों के चरित्र पर प्रकाश पड़ता है। **'कर्मभूमि'** में प्रेमचंद ने अनेक स्थलों पर नाटकीय प्रणाली का प्रयोग करते हुए पात्रों के चरित्रों को उद्घाटित करने का प्रयत्न किया है। सुखदा-अमरकांत के बीच परस्पर संवाद का उदहारण देखा जा सकता है। **'कर्मभूमि'** के अधिकांश पात्र मध्यवर्गीय समाज से सम्बंधित हैं। इस समाज की विभिन्न समस्याएँ उनके व्यक्तिगत जीवन की गहनताओं के माध्यम से उभरकर सामने आई है। जमींदार, महाजन, कृषक, बुद्धिजीवी, समाज-सुधारक, अछूत, तेजस्विनी स्त्रियाँ आदि सभी पात्र इन समस्याओं का हल करने में समान योग देते हैं। इन पात्रों से उपन्यास के पाठक किसी-न-किसी रूप में प्रभावित अवश्य होते रहते हैं और इस प्रकार वे पाठक का ही प्रतिरूप बन जाते हैं। संपूर्ण उपन्यास में ऐसा प्रतीत होता है कि पात्र किसी विशेष उद्देश्य की पूर्ति के लिए जी रहे हैं। उस लक्ष्य की प्राप्ति अर्थात् भेद-भाव रहित समाज की स्थापना के बाद उपन्यास की समाप्ति हो जाती है।

कथोपकथन

संवाद, कथोपकथन अथवा वार्तालाप भी उपन्यास का एक जरुरी अंग है। कथोपकथन से अभिप्राय है पात्रों का परस्पर वार्तालाप। उपन्यास में कथोपकथन पात्रों का चरित्रांकन करने के साथ ही कथा को विकसित करने में भी सहायता प्रदान करते हैं। 'कर्मभूमि' में ऐसे कई संवाद हैं जिनसे भावी कथा के स्पष्ट संकेत मिलते हैं। अमरकांत और समरकान्त के इस संवाद से आने वाली कथा का संकेत मिलने के साथ ही पात्रों के चरित्र पर भी प्रकाश पड़ता है। अमरकांत ने अधीर होकर कहा –

"आप बार-बार उसकी चर्चा क्यों करते हैं? मैं चोरी और डाके के माल का रोजगार न करूँगा, चाहे आप खुश हों या नाराज। मुझे ऐसे रोजगार से घृणा होती है।"

"तो मेरे काम में वैसी आत्मा की जरुरत नहीं। मैं ऐसी आत्मा चाहता हूँ जो अवसर देखकर, हानि-लाभ का विचार करके काम करे।"

अमरकांत और समरकान्त के इसी संवाद से अमरकांत के चरित्र की दृढ़ता तथा समरकान्त की धन-पिपासु प्रवृति का भी संकेत मिलता है। **'कर्मभूमि'** में कथोपकथन सरल, रोचक, सजीव तथा प्रसंगानुकूल हैं। भाषा पात्रों के मानसिक स्तर एवं शिक्षा के अनुसार है। आकार की दृष्टि से वे छोटे-छोटे तथा भावाभिव्यक्ति में पूर्णतः समर्थ हैं। अमरकांत, डॉ. शान्तिकुमार, सलीम आदि का वार्तालाप पात्रों के मानसिक स्तर एवं उनके चरित्र के अनुकूल है।

'कर्मभूमि' में लेखक ने संक्षिप्त व सरल संवादों की योजना की है। पात्रों की पारस्परिक बातचीत द्वारा उनके चरित्र के गुण-दोषों पर पर्याप्त प्रकाश डाला गया है। उदहारण के लिए उपन्यास के प्रारंभिक कथा-भाग में काले खां और अमरकांत की बातचीत से यह स्पष्ट है कि जहाँ काले खां चोरी करना और उन चीजों को बेचना अच्छा समझता था वहां अमरकांत को इस कार्य से घृणा थी।

अमर ने दृढ़ता से कहा- *"मैंने कह दिया मुझे इसकी जरुरत नहीं।"*

"पछताओगे लाला, खड़े-खड़े ढाई सौ में बेच लोगे।"

"क्यों सिर खा रहे हो? मैं इसे नहीं लेना चाहता।"

कहा जा सकता है कि **'कर्मभूमि'** में संवादों की भाषा पात्रानुकूल है। अमरकांत, डॉ. शान्तिकुमार आदि पढ़े-लिखे पात्र हैं, अतः उनकी भाषा में प्रायः शब्दों के शुद्ध रूप का प्रयोग है। इसके विपरीत अछूत पात्र सुमेर, ईदू, जंगली आदि जब बोलते हैं तो उनके शब्द तद्भव या विकृत अधिक रहते हैं। यथा- ईदू को दूर की सूझी – *"मर नहीं मिटेंगे – पंचो, चौधरियों को जेहल में ठूंस दिया जाएगा।"*

अतः भाषा को पात्रों के अनुकूल और सरल बनाये रखकर प्रेमचंद ने संवाद को स्वाभाविक बनाया है।

देशकाल

देशकाल का दूसरा नाम वातावरण भी है। उपन्यास में देशकाल-वातावरण या युग-धर्म की सजीवता भी आवश्यक है। इसी कारण लेखक अपने उपन्यास में युग विशेष और देश विशेष की सामाजिक स्थिति, रीति-रिवाज, आचार-विचार, संस्कृति, सभ्यता और विचारधारा पर प्रकाश डालता है, जिससे की उपन्यास वास्तविक और सजीव बन जाए। पात्रों के कथन, क्रिया-कलाप, वेश-भूषा, खान-पान, आचार-विचार सबमें युगधर्म की स्वाभाविकता झलकनी चाहिए।

उपन्यास में घटनाओं तथा पात्रों की स्थिति के अनुरूप वातावरण का निर्माण आवश्यक है अन्यथा प्रभावात्मकता नहीं आ पाती। प्रत्येक समाज और युग की विशिष्ट परिस्थितियाँ, आचार-व्यवहार, रीति-उत्सव और विभिन्न समस्याएँ होती हैं। सबका वर्णन देश-काल के अंतर्गत किया जाता है। राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक मनोदशा का निरूपण भी वातावरण का ही अंग है। **'कर्मभूमि'** में प्रेमचंद ने उस युग की अनेकानेक समस्याओं का चित्रण किया है। जमींदारों के अत्याचार, अधिकारियों की बर्बरता, आन्दोलनकारियों का अहिंसात्मक प्रदर्शन, अछूतों के मंदिर-प्रवेश का प्रयास आदि का इसमें विस्तारपूर्वक वर्णन हुआ है। वह युग पूरी तरह से गांधीवादी विचारधारा से प्रेरित था। 'कर्मभूमि' में उस गांधीवादी युग का व्यापक चित्रण हुआ है। अमरकांत द्वारा स्वावलंबी बनने के लिए चरखा कातना और घर-घर में घूमकर खादी बेचना भी युगीन विशेषता को प्रदर्शित करता है।

उपन्यास में समाज के दो वर्गों में स्पष्टतः बंटे होने की बात का पता भी चलता है। लाला समरकान्त जैसे महाजन, महंत जैसी जमींदार और धनीराम जैसे रईस एवं विलासी लोग हैं तो दूसरी ओर अछूत और गरीब लोग जिन्हें मंदिर प्रवेश का भी अधिकार नहीं है, और उनके साथ ही असहाय किसान हैं जो लगान की मार से पीडित हैं। समाज के इन वर्गों में व्याप्त वैषम्य को मिटाकर परस्पर प्रीति की स्थापना प्रेमचंद का लक्ष्य था। इसमें उन्हें सफलता मिली है। 'कर्मभूमि' में प्रेमचंद ने गाँव और नगर दोनों के जीवन की विशेषताओं अर्थात् नगर के भोग-विलास और गाँव की असहाय अवस्था का निरूपण करके वातावरण के निर्माण की दृष्टि से **'कर्मभूमि'** को स्वाभाविक और प्रभावपूर्ण बना दिया है। नारी-जागरण का दृष्टिकोण भी उस समय के समाज में व्याप्त हो चुका था। सुखदा, रेणुका, नैना, मुन्नी भिखारिन आदि सभी स्त्री पात्र इसके उदहारण हैं। वे केवल घर की चारदीवारी में बंद रहने वाली स्त्रियाँ नहीं हैं वरन समाज की समस्याओं को समझ और उनसे जूझने वाली वीर रमणियाँ हैं।

चित्र : प्रेमचंद की कहानी पर बनी टेलीफिल्म श्रृंखला **'तहरीर'** के **'ईदगाह'** फिल्म में **'सुरेख सीकरी'** . साभार : http://www.tribuneindia.com/2005/20050731/spectrum/main7.htm

'कर्मभूमि' में युग-जीवन का समग्र चित्रण सजीव रूप में प्रस्तुत किया गया है। यह राष्ट्रीय उत्थान का युग था। प्रत्येक क्षेत्र में जीवन संघर्षमय तथा अस्त-व्यस्त हो रहा था। पाखण्ड, ढोंग एवं बाह्याडम्बर ने धर्म का रूप धारण करके अशिक्षित जनता का जीवन

दूभर कर दिया था। अंधविश्वास और भाग्यवाद ने जनता को धर्मभीरु बना दिया था। महंत धर्म के नाम पर भोगविलास का जीवन व्यतीत कर रहे थे। वर्ग-व्यवस्था के हथियार के द्वारा निम्न वर्ग का शोषण किया जा रहा था। समाज का आधार धन था। उस समय नारी की भी स्थिति अच्छी नहीं थी। छुआछूत की समस्या इतनी प्रबल थी की कोई भी अछूत मंदिर में प्रवेश भी नहीं कर सकता था।

इस उपन्यास में अमरकांत चरखा कातने के कार्य को आत्मशुद्धि का साधन मानता है। इससे गांधीयुगीन आन्दोलन का आभास मिलता है। वास्तव में 'कर्मभूमि' में गांधी के विचारों, प्रवृत्तियों तथा सुधारों को व्यावहारिक रूप मिलता है। अंत में उनकी अहिंसा तथा समझौतावादी प्रवृत्ति परिलक्षित होती है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि 'कर्मभूमि' में देशकाल का सजीव निरूपण किया गया है। इस उपन्यास में प्रेमचंद ने समसामयिक समाज का प्रभावशाली और सच्चा चित्र अंकित करने का सफल प्रयास किया है।

भाषा-शैली

उपन्यास के विभिन्न तत्वों में भाषा-शैली का महत्वपूर्ण स्थान होता है। भाषा के माध्यम से अभिव्यक्त होकर ही लेखक के विचार पाठक तक पहुँचते हैं। यदि भाषा प्रौढ़ एवं प्रवाहपूर्ण होगी तो रचना के प्रति पाठक का आकर्षण बढेगा। प्रेमचंद की भाषा सरल, प्रवाहपूर्ण और बोलचाल की शब्दावली के निकट है। वे भाषा को कृत्रिम बनाने के पक्ष में नहीं थे। हिंदी में लिखना प्रारंभ करने से भी पूर्व उनकी अभिव्यक्ति उर्दू में होने लगी थी। यही कारण है कि उनके हिन्दी उपन्यासों में भी उर्दू-शब्दों का व्यापक प्रयोग रहता है।

'कर्मभूमि' की भाषा को प्रेमचंद ने पात्रों और विचारों के अनुकूल बनाये रखने के लिए उसमें तत्सम शब्दों के अतिरिक्त तद्भव तथा उर्दू-फारसी के शब्दों का भी उपयुक्त प्रयोग किया है। चिंतन के क्षणों में कही-कहीं कवित्वपूर्ण प्रसंगों का वर्णन करते हुए उनकी भाषा संस्कृतनिष्ठ हो जाती है – *"श्यामल क्षितिज के गर्भ से निकलने वाली लाल ज्योति की भांति अमरकांत को अपने अंतःकरण की सारी क्षुद्रता, सारी कलुषता के भीतर से एक प्रकाश-सा निकलता हुआ जान पड़ा, जिसने उनके जीवन को रजत शोभा प्रदान कर दी। दीपकों के प्रकाश में, संगीत के स्वरों में, गगन की तारिकाओं में उसी शिशु की छवि थी, उसी का माधुर्य था, उसी का नृत्य था।"*

इसके साथ ही जहाँ कहीं जरुरी हुआ उर्दू-फारसी के शब्दों का भी भरपूर प्रयोग किया है। खासकर मुस्लिम पात्रों सलीम, सकीना, पठानिन आदि के प्रसंग में। यथा – *"नहीं डाक्टर साहब, आजकल इम्तहान के झंझट में पड़ा हुआ हूँ। मुझे तो इससे नफरत है। खुदा जनता है, नौकरी से मेरी रूह कांपती है, लेकिन करूँ क्या, अब्बाजान हाथ धोकर पीछे पड़े हैं। यह तो आप जानते ही हैं, मैं एक सीधा जुमला ठीक नहीं लिख सकता, मगर लियाकत कौन देखता है। यहाँ तो सनद देखी जाती है। जो अफसरों का रुख देखकर काम कर सकता है, उसके लायक होने में सुबहां नहीं। आजकल यही फन सीख रहा हूँ।"*"इसी प्रकार जहाँ अछूत या किसान ग्रामीणों की बातचीत है वहां-वहां उनकी भाषा में तद्भव एवं सरल शब्दों का प्रयोग अधिकाधिक हुआ है।

लेखक ने भाषा को सहज बनाये रखने के लिए मुहावरों और लोकोक्तियों आदि का भी प्रयोग किया है। उपरोक्त उदहारण में ही **'रूह कांपना'**, **'हाथ धोकर पीछे पड़ना'** जैसे मुहावरे देखे जा सकते हैं। भाषा को सजीव बनाये रखने के लिए **'काम-धंधा'**, **'घुडके-झिडके'**, **'भोली-भाली'**, **'घुमने-घामने'** आदि संयुक्त शब्दों का भी प्रयोग किया गया है जिससे भाषा के प्रवाह में वृद्धि हुई है। भाषा के समान ही कर्मभूमि की शैली में भी विविधता, प्रवाह एवं सजीवता है। उपन्यास में मुख्यतया विश्लेषणात्मक शैली की प्रधानता रहती है। कर्मभूमि का विस्तार भी इसी ओर संकेत करता है। इसके अतिरिक्त इसमें संवाद शैली का स्थान-स्थान पर प्रयोग करके कथा-विकास सरस रूप में किया गया है।

प्रेमचंद के उपन्यास गबन पर आधारित फिल्म गबन देखने के लिए इस लिंक को क्लिक करें –
https://www.youtube.com/watch?v=YU5Nv5zSYuo

इस प्रकार छोटे-छोटे वाक्यों में विभिन्न प्रकार की बोलचाल की सहज-सरल शब्दावली का प्रयोग करते हुए तथा भावों के अनुकूल अभिव्यक्ति की शैली में परिवर्तन प्रस्तुत करके प्रेमचंद ने **'कर्मभूमि'** को एक सशक्त उपन्यास बना दिया है। उनकी भाषा-शैली इतनी प्रभावशाली है कि उपन्यास को एक बार पढ़ना प्रारंभ कर देने के बाद पाठक को उसे समाप्त कर लेने पर ही संतोष होता है।

उद्देश्य

साहित्य की सभी विधाओं का उद्देश्य आनंद प्रदान करना है। उपन्यास भी उससे वंचित नहीं है। साहित्य आनंद प्रदान करता है किंतु वह सस्ते मनोरंज का साधन नहीं बन सकता। उपन्यास के उद्देश्य के सन्दर्भ में प्रेमचंद ने स्वयं ही कहा है कि – *"उपन्यास में*

*युगीन समस्याओं का चित्रण करना ही मूल उद्देश्य होना चाहिए, जिससे मनुष्य की मौलिक प्रवृत्तियों का संघर्ष निभता दिखाई पड़ता रहे।"*अतः मनुष्य के अनुभव की गहराई और उसे समृद्ध करने का सार्थक प्रयत्न किसी भी उपन्यास का सार्थक उद्देश्य माना गया है। इस सम्बन्ध में अन्यत्र प्रेमचंद ने कहा है कि – *"जब हम देखते हैं की भांति-भांति के राजनीतिक और सामाजिक बंधनों में जकडे हुए हैं, जिधर निगाह उठती है दुःख और दरिद्रता के भीषण दृश्य दिखाई देते हैं, विपत्ति का करुण क्रंदन सुनाई देता है तो कैसे संभव है कि किसी विचारशील प्राणी का हृदय पिघल न उठे।"*

' कर्मभूमि' में भी प्रेमचंद के अन्य उपन्यासों की भांति ही महान उद्देश्य निहित हैं। अछूतों एवं किसानों का उद्धार तथा दम्भी एवं विलासी व्यक्तियों के जीवन तथा चरित्र में परिवर्तन लाना ही उनका मुख्य उद्देश्य था। अमरकांत को नायक बनाकर उसके जीवन की विविध घटनाओं द्वारा उन्होंने अपने उद्देश्य को मूर्त रूप प्रदान किया है। उपन्यास के अंत में अछूतों को मंदिर-प्रवेश का अधिकार दिलाकर तथा किसानों की लगान विषयक समस्या पर विचार करने के लिए एक समिति बनाकर, जिसमें अधिक से अधिक जनता के ही प्रतिनिधि हैं, अपने उद्देश्यों को पूरा करते हुए लेखक को देखा जा सकता है। लाला समरकान्त और रईस धनीराम के चरित्र में भी परिवर्तन आता है। पुलिस के अत्याचार और अधिकारी वर्ग की कठोर एवं अन्यायपूर्ण नीति का प्रदर्शन भी कर्मभूमि का उद्देश्य रहा है। इन सबके सजीव चित्रण में उपन्यासकार को पर्याप्त सफलता मिली है। समाज के विभिन्न वर्गों की यथार्थ दशा का चित्रण करना भी उनका उद्देश्य था, और इसके माध्यम से उन्होंने जनमानस को आंदोलित करके अभीष्ट की प्राप्ति कर ली है।

कहा जा सकता है कि 'कर्मभूमि' की रचना में प्रेमचंद का मुख्य उद्देश्य तत्कालीन सामाजिक, राजनीतिक जीवन का अंकन करते हुए अछूतोद्धार, नारी स्वातंत्र्य, राष्ट्र-प्रेम, स्वाधीनता-आन्दोलन की भावनाओं को मुखरित करना रहा है। युगपुरुष महात्मा गांधी के आदर्शों से अनुप्राणित इस उपन्यास में सत्य, अहिंसा, सहिष्णुता, सत्याग्रह आदि विचारों को प्रतिपादित करते हुए प्रेमचंद ने अपने उद्देश्य को साकार किया है। 'कर्मभूमि' में उनके समाज सुधार का क्षेत्र काफी विस्तृत एवं व्यापक फलक पर प्रस्तुत हुआ है। धार्मिक मनोवृत्ति के संकुचन के द्योतक संघर्ष निम्न वर्ग में जागृति का प्रतीक है। प्रेमचंद ने अपने सुधारवादी विचारों को प्रतिपादित करने के लिए समाज की विविध समस्याओं का आधार ग्रहण किया है। वे इस उपन्यास में आदर्शमूलक सुधारवादी उद्देश्य की स्थापना में सफल रहे हैं।

समग्रतः उपन्यास के तत्वों के आधार पर 'कर्मभूमि' एक सफल रचना है। इसकी कथावस्तु रोचक, सुसंबद्ध तथा प्रभावोत्पादक है। पात्रों का चरित्र-चित्रण सजीव, मानवोचित गुणों से युक्त है। संक्षिप्त, सहज, स्वाभाविक कथोपकथन पात्रों के चरित्र को विकसित करने तथा कथा के विकास में सहायक है। देशकाल का चित्रण तो बेहद व्यवस्थित और यथार्थवादी है। इसकी सुबोध, सरल एवं भावानुरूप भाषा उपन्यासकार के विचारों को वहन करने में पूर्ण समर्थ रही है। युगजीवन की सामाजिक, राजनीतिक समस्याओं की पृष्ठभूमि में स्थाई जीवनमूल्यों को प्रस्थापित किया गया है। अतः **'कर्मभूमि'** प्रेमचंद की उपन्यास कला के सफल संयोजन का परिणाम है।

क्या आप जानते हैं ?

प्रेमचंद की स्मृति में भारतीय डाकतार विभाग की ओर से 31 जुलाई 1980 को उनकी जन्मशती के अवसर पर 30 पैसे मूल्य का एक डाक टिकट जारी किया गया। गोरखपुर के जिस स्कूल में वे शिक्षक थे, वहाँ प्रेमचंद साहित्य संस्थान की स्थापना की गई है। इसके बरामदे में एक भित्तिलेख है जिसका चित्र दाहिनी ओर दिया गया है। यहाँ उनसे संबंधित वस्तुओं का एक संग्रहालय भी है। जहाँ उनकी एक वक्षप्रतिमा भी है।

कर्मभूमि में समस्या-निरूपण

प्रेमचंद समस्यामूलक उपन्यासकार माने जाते हैं। उनके उपन्यासों में राजनीतिक, सामाजिक, पारिवारिक विविध प्रकार की समस्याएँ वर्णित हैं। उनके प्रायः सभी उपन्यासों में कोई एक प्रमुख समस्या मिलती है। प्रमुख समस्या के साथ-साथ अन्य समस्याओं का उल्लेख भी उनके उपन्यास में हुआ है। कर्मभूमि में प्रेमचंद ने अपने समय के समाज तथा सामाजिक समस्याओं का पूर्ण चित्र अंकित किया है। उपन्यास का आरम्भ आधुनिक शिक्षा प्रणाली की आलोचना से होता है तथा अंत किसानों की शोषित दशा के समाधान के लिए कमीटी के गठन द्वारा। लेखक ने कर्मभूमि में नगर एवं गाँव की समस्याओं के भिन्न-भिन्न चित्र प्रस्तुत किए हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि दोनों में कोई सम्बन्ध नहीं है। नगर एवं ग्राम की सामाजिक, आर्थिक तथा धार्मिक प्रवृत्तियों के चित्रांकन द्वारा लेखक ने अपने समसामयिक युग का सुन्दर चित्र उपस्थित किया है।

उपन्यास का युगधर्म है अपने चतुर्दिक वातावरण से प्रभावित हो उसकी समस्याओं का चित्रण करना। प्रेमचंद सहृदय थे, अतः जनता के दुःख दर्द ने उनको व्याकुल कर दिया, उनकी व्याकुलता ने उसे अभिव्यक्ति दी, उनका समाधान प्रस्तुत किया। देश की विषमता कभी-कभी उनको इतना व्याकुल कर देती थी की वह ऐसी क्रांति के लिए उत्सुक हो उठते थे, जो इन सब विषमताओं का अंत कर दे। अमरकांत के इस विचार में उनकी क्रांतिकारी मनोवृत्ति प्रकट हुई है – *"वह अब क्रांति में ही देश का उद्धार समझता था – ऐसी क्रांति में, जो सर्वव्यापक हो, जीवन के मिथ्या आदर्शों का, झूठे सिद्धांतों का, परिपाटियों का अंत कर दे, जो एक नए युग की प्रवर्तक हो, एक नयी सृष्टि खड़ी कर दे, जो मिट्टी के असंख्य देवताओं को तोड़-फोड़कर चकना-चूर कर दे। जो मनुष्य को धन और धर्म के आधार पर टिकने वाले राज्य के पंजे से मुक्त कर दे। ... लेकिन उदार हिन्दू समाज उस वक्त तक किसी से नहीं बोलता जब तक उनके लोकाचार पर खुल्लम-खुल्ला आघात न हो; कोई क्रांति नहीं, क्रांति के बाबा का ही उपदेश क्यों नकारे, उसे परवाह नहीं होती।"*

प्रेमचंद की प्रमुख समस्या अछूतों की है। दो रूपों में अछूतों की समस्या को उभारा गया है – एक तो सामाजिक तिरस्कार और उपेक्षा की दृष्टि से और दूसरे किसान के रूप में उनकी कठिनाईयों पर विचार किया गया है। समस्या का प्रथम पहलू नगर की कथा से सम्बंधित है और दूसरा ग्राम की कथा से। इस प्रमुख समस्या के अतिरिक्त मजदूरों की आवास की समस्या, सामाजिक धर्माडंबर की समस्या, शिक्षा संबंधी समस्या, किसानों की समस्या, पारिवारिक समस्या, स्त्रियों की समस्या आदि पर भी लेखक ने विचार किया है।

अछूतों को मंदिर में प्रवेश का अधिकार न था। मंदिर में कथा का आकर्षण अन्त्यजों को मंदिर में खींच लाता है। उन्हें मंदिर में घुसता देख ब्रह्मचारी कहते हैं – *"बात क्या है, यहाँ लोग भगवान् की कथा सुनने आते हैं कि अपना धर्म भ्रष्ट करने आते हैं। भंगी, चमार जिसे देखो घुसा चला आता है – ठाकुरजी का मंदिर न हुआ सराय हुई।"* बेचारों को जूते खाने पड़े। शान्तिकुमार अछूतों की इस दयनीय स्थिति का चित्रण करते हुए कहते हैं – *"तुम तन-मन से दूसरों की सेवा करते हो, पर तुम गुलाम हो। तुम्हारा समाज में कोई स्थान नहीं। तुम समाज की बुनियाद हो। तुम्हारे ऊपर समाज खड़ा है, पर तुम अछूत हो। तुम मन्दिरों में नहीं जा सकते।"* शान्तिकुमार और सुखदा नगर में अछूतों को मंदिर-प्रवेश का अधिकार प्राप्त करने के लिए उत्तेजित करते हैं। असंख्य लोगों की आहुति देकर अंत में अपना अधिकार पाने में सफल होते हैं।

ग्राम के अछूत किसानों की समस्या किसानों और अछूतों दोनों की समस्याओं का प्रतिनिधित्व करती है। गाँव में दरिद्रता छाती पीट-पीटकर रो रही थी। उनके बच्चे स्कूलों में पढ़ भी नहीं सकते थे। अज्ञान और अशिक्षा का साम्राज्य था। अछूतों को चेतना और सुशिक्षा की आवश्यकता थी। अमर उनमें सुशिक्षा का प्रचार करता है और उन्हें लिखना-पढ़ना सिखाता है। उनके मन में सम्मान और स्वाभिमान की भावना जाग्रत करता है। किसानों की आर्थिक दशा अच्छी नहीं थी। प्रेमचंद ने उनकी दुरावस्था का चित्रण करते हुए लिखा है – *"इस इलाके के जमींदार एक महंत जी थे।...ठाकुरद्वारे में कोई न कोई उत्सव होता ही रहता था।...असमियों को इन अवसरों पर बेगार देनी पड़ती थी; भेंट न्योछावर, पूजा चढ़ावा आदि नामों से दस्तूरी चुकानी पड़ती थी; लेकिन धर्म के मुआमले में कौन मुँह खोलता? धर्म-संकट सबसे बड़ा संकट है। फिर इलाके के काश्तकार सभी जातियों के लोग थे। गाँव पीछे दो-चार घर ब्राह्मण, क्षत्रियों के थे भी तो उनकी सहानुभूति असमियों की ओर न होकर महंतजी की ओर थी। ... बेचारे एक तो गरीब, ऋण के बोझ से लदे हुए – दूसरे मूर्ख, न कायदा जाने, न क़ानून, महंतजी जितना चाहे इजाफा करें जब चाहे बेदखल करें, किसी में बोलने का सहस न था। अक्सर खेती का लगान इतना बढ़ जाता था की सारी उपज लगा के बराबर भी न पहुँचती थी, किन्तु लोग भाग्य को स्वीकार, भूखे नंगे रहकर, कुत्तों की मौत मरकर, खेत जोतते जाते थे। ऋण बोझ से दबा किसान संकटों में भी जी इसलिए रहा था कि उसे मौत नहीं मिलती थी।"*

1929 का वर्ष दुनियाँ भर में मंदी का वर्ष था। मंदी के कारण सब वस्तुओं का भाव गिर गया था। ऐसी स्थिति में उसके लिए लगान चुकाना भी मुश्किल हो गया था। अतः किसान लगान में छूट चाहते थे किन्तु अमर के प्रार्थनापूर्ण निवेदन पर भी महंत ने बात न मानी। लेकिन किसानों में जागृति आ चुकी थी, सबने हड़ताल और आन्दोलन का सहारा लिया। सरकार की ओर से किये जाने वाले दमन का भी वे डटकर मुकाबला करते हैं। अमर और गाँव के अन्य लोग प्रतिकार करने के कारण पकड़े जाते हैं। अंत में किसानों की दशा पर विचार करने के लिए सरकार और जनता में समझौता हो जाता है और कैदी छोड़ दिए जाते हैं।

प्रेमचंद के उपन्यास गोदान पर आधारित फिल्म 'गोदान' देखने के लिए इस लिंक को क्लिक करें –

https://www.youtube.com/watch?v=elo4HBqgUyo

गाँव में ही आर्थिक विषमता नहीं है बल्कि नगर में मजदूर भी इसी अन्याय के शिकार हैं। नगर के मजदूरों को आवास एवं स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं का सामना करना पड़ता है। उनकी स्थिति दयनीय है। सुखदा उनके जीवन में सुधार के लिए कार्य करना चाहती है और करती भी है। उनके लिए आंदोलनों में बारी-बारी से सभी अपना योगदान देते हैं। सुखदा को उनमें आई जागरूकता का भान है। वह गिरफ्तार होने के बाद कहती है – *" लेकिन वह दिन दूर नहीं है, जब यही आंसू चिंगारी बनकर अन्याय को भस्म कर देंगे, इसी राख से वह अग्नि प्रज्वलित होगी, जिसकी आंदोलित शिखाएं आकाश को हिला देंगी। नैना के बलिदान व सामूहिक शक्ति के सामने धनिकों को झुकना पड़ता है। मजदूरों को जमीन मिल जाती है।"*

कर्मभूमि उपन्यास में धर्म की समस्या अत्यंत विकट रूप में चित्रित हुई है। मठाधीश के रूप में महंत आशाराम का प्रेमचंद पर्याप्त मजाक उड़ाते हैं। उनके दर्शन के लिए कितने ही लोगों की खुशामद करनी पड़ती है। उनके राजसी ठाट को देखकर उनकी निर्दयता पर अमरकांत को क्रोध आता है। एक ओर जनता दो समय रोटी न प्राप्त कर सकने के कारण भूखी मर रही है, और वहां भगवान के नाम पर इतना अपव्यय हो रहा है! इस सन्दर्भ में उसका यह कथन देखिए - *"यहाँ जब देखो, भगवान् की आरती हो रही है और हम भीतर नहीं जा सकते... ।"*

प्रेमचंद जी ने धर्म के दूसरे रूप - उसकी अनुदारता, संकीर्णता का भी चित्रण किया है, जो अछूतों के कानों में रामायण की कथा का एक शब्द भी नहीं पड़ने देती। मंदिरों में हरिजन-प्रवेश की समस्या का अत्यंत कौशल से चित्रण हुआ है। कथा सुनते हुए इन पर उच्चवर्गीय धार्मिक पुरुष जूते बरसाते हैं। अछूतों की छायामात्र से ही उनका धर्म भ्रष्ट होने लगता है, किन्तु उनको घूसों-लातों से पीटने के स्पर्श से उनकी कोई हानि नहीं होती।

शिक्षा की समस्या इस उपन्यास की एक प्रमुख समस्या है। लेखक उपन्यास का आरम्भ ही तत्कालीन शिक्षा-प्रणाली के विवेचन द्वारा करता है – *"हमारे स्कूलों और कॉलेजों में जिस तत्परता से फीस वसूल की जाती है, शायद मालगुजारी भी उतनी सख्ती से नहीं वसूल की जाती। बड़े कठोर नियम हैं ... देर से आईये तो जुर्माना, किताबें न खरीद सको तो जुर्माना... शिक्षालय क्या हैं, जुर्मानालय हैं... ।"*

सामाजिक प्रवृत्तियों के मूल में पारिवारिक जीवन की समस्या मुख्य सामाजिक समस्या है। लाला समरकान्त के परिवार में पारिवारिक स्नेह एवं आस्था का अभाव है, जिसके कारण वह सुखी नहीं हैं। पिता के साथ पुत्र की नहीं निभती, पुत्र पिता का सम्मान नहीं करता। पति-पत्नी परस्पर शारीरिक सम्बन्ध रखते हुए भी आत्मिक सामंजस्य स्थापित करने में असफल रहते हैं, जिसके कारण पूरे घर में शांति एवं सुख का अभाव है। इसी स्नेह के अभाव ने ही 'कर्मभूमि' में पारिवारिक समस्या को जन्म दिया है।

कर्मभूमि में स्त्रियों से सम्बंधित समस्या पर भी प्रेमचंद ने पर्याप्त ध्यान दिया है। इस उपन्यास में सुखदा, सकीना, नैना, पठानिन, मुन्नी आदि के माध्यम से नारी समस्या से सम्बंधित सभी पक्षों पर विभिन्न दृष्टियों से प्रकाश डाला गया है। सबसे लोमहर्षक घटना है मुन्नी के साथ गोरों द्वारा किये जाने वाले बलात्कार और उसका प्रतिशोध लेने के लिए मुन्नी द्वारा अमरकांत की दुकान पर गोरों की हत्या। अंग्रेजों के इस साहस को पराधीन भारत की परिस्थिति से जोड़कर भी देखा जा सकता है। इस उपन्यास में सुखदा सम्पन्नता के जीवन से मुक्त होकर सेविका का पथ ग्रहण करती है। सकीना नारी की प्रेरणा, शक्ति और असीम सद्भावनाओं की प्रतीक है, जिसे अवसर मिलने पर अपनी सेवा द्वारा सार्थक कर पाती है। नैना भारतीय नारीत्व के गौरव को सुरक्षित रखते हुए स्वयं को समाज पर न्यौछावर कर देती है। उपन्यास के अन्य सभी पात्र इन स्त्री पात्रों से प्रेरणा ग्रहण करते हैं। मुन्नी नामक एक अत्यंत तिरस्कृत नारी का भी **'कर्मभूमि'** में चित्रण किया गया है। इन स्त्रियों की समस्या वास्तव में भारतीय समाज की एक महत्त्वपूर्ण समस्या है।

क्या आप जानते हैं?

प्रेमचंद का मूल नाम धनपत राय था जिन्हें बाद में नवाब राय और प्रेमचंद के नाम से जाना गया। उपन्यास के क्षेत्र में उनके योगदान को देखकर बंगाल के विख्यात उपन्यासकार शरतचंद्र चट्टोपाध्याय ने उन्हें उपन्यास सम्राट कहकर संबोधित किया था।

समग्रतः कहा जा सकता है कि प्रेमचंद ने 'कर्मभूमि' में जिन समस्याओं को उठाया है, वे सभी प्रायः गांधी-युग की समस्याएँ हैं। इन समस्याओं के माध्यम से प्रेमचंद ने तत्कालीन समाज का एक वास्तविक चित्र अंकित किया है। इस काल में गांधी जी द्वारा जिन सुधारों के प्रति विशेष आग्रह प्रकट किया गया था लगभग वे सभी उचित अनुपात में **'कर्मभूमि'** में चित्रित हुए हैं। इसके अतिरिक्त प्रेमचंद ने रचनात्मक कार्यों की ओर भी विशेष आग्रह प्रकट किया है।

भूमि का प्रश्न और उसकी समस्या, जमींदारों के अत्याचार तथा उनके परिणाम, महाजनों, सेठ-साहूकारों की सूदखोरी की प्रवृत्ति, उनका शोषण, अधिकारी-वर्ग की नृशंसता आदि हमें तत्कालीन आन्दोलन-काल का स्मरण दिलाते हैं। हडतालों आदि की समस्या को उठाकर प्रेमचंद ने क्रांति एवं आन्दोलन की समस्या को उठाया है और उसका हल अंत में गांधीवादी अहिंसामूलक सत्याग्रह एवं समझौतावाद में देखा है। **कर्मभूमि में गांधीवाद**

प्रत्येक साहित्यकार अपने युग की परिस्थितियों से न केवल परिचित होता है बल्कि उससे प्रभावित भी होता है। लेकिन एक ओर जहाँ वह अपने युग से प्रभावित होता है वहीं वह दूसरी ओर युग-निर्माता का कार्य भी सम्पादित करता है और युगीन चेतना को नवीन दिशा प्रदान करता है। प्रेमचंद भी तत्कालीन परिस्थितियों से अत्यधिक प्रभावित थे, इसी कारण उनकी विचारधारा युग के बदलते प्रतिमानों एवं मापदंडों के अनुकूल ही परिवर्तित होती रही है। प्रेमचंद के साहित्य-क्षेत्र में आने से पहले ही गांधी जी राजनीति के क्षेत्र में पदार्पण कर चुके थे और उनका प्रभाव भारतीय राजनीति में तेजी से बढ़ने लगा था। प्रेमचंद गाँधी युग के जागरूक लेखक थे। सामाजिक एवं राजनीतिक क्षेत्र में जो कार्य गांधीजी कर रहे थे, प्रेमचंद ने उसे अपनी रचनाओं के जरिये अंजाम दिया। गांधी ने प्रेमचंद को प्रेरणा भी दी और दृष्टि भी। स्वयं प्रेमचंद ने कहा है कि – *"मैं दुनियाँ में महात्मा गांधी को सबसे बड़ा मानता हूँ। उनका भी उद्देश्य यही है कि मजदूर और काश्तकार सुखी हों। वह लोगों को बढाने के लिए आन्दोलन मचा रहे हैं। मैं लिख करके उनको उत्साह दे रहा हूँ। महात्मा गांधी हिन्दू-मुसलमानों की एकता चाहते हैं। मैं भी हिन्दी और उर्दू को मिलाकर के हिन्दुस्तानी बनाना चाहता हूँ।"*

गांधीवाद कोरी चिंतनवादी विचारधारा नहीं है। यह दर्शन एक विचार भी है और कर्म भी। दूसरे शब्दों में यह उपयोगितावाद और अध्यात्मवाद का समन्वय है, जिसके दो पक्ष हैं – सैद्धांतिक और व्यवहारिक। एक के तहत उनकी चिंतनधारा आती है तो दूसरे के तहत उनके रचनात्मक कार्य। गांधी ने सिद्धांतों को व्यवहारिक क्षेत्र में ग्रहण किया। प्रेमचंद के उपन्यासों में भी उनके इसी रूप का दर्शन होता है।

गांधी दर्शन का आधार **'सत्य'** है। सत्य का पथ न्याय है। अतः उसी की सदैव विजय होती है। सत्य को वे व्यापक रूप में ग्रहण करते थे। प्रो. शांति कुमार और अमरकान्त 'कर्मभूमि' में सच्चाई के लिए जीना और उसके लिए लड़ना अपना हक़ मानते हैं। सत्य के मार्ग पर चलने के लिए अहिंसा को अपनाना आवश्यक है। हिंसा का तात्पर्य केवल हत्या ही नहीं है। वरन मारपीट, कटुवचन, अत्याचार भी हिंसा है। प्राणी मात्र पर दया और प्रेम अहिंसा के अंग हैं। हिंसा पर अहिंसा द्वारा ही विजय प्राप्त की जा सकती है। **'कर्मभूमि'** में सर्वत्र अहिंसा का समर्थन है। अमरकांत और शान्तिकुमार अहिंसा के समर्थक हैं। जेलर द्वारा काले खां को पीटे जाने पर वह उसका प्रतिकार पीटकर नहीं लेना चाहता। वह जानता था, आग, आग से नहीं, पानी से शांत होती है। मुन्नी के विरुद्ध जज का निर्णय सुनकर सलीम उसे पिटवाने की सोचता है इसपर शान्तिकुमार अत्यंत क्रुद्ध होते हैं।

प्रेमचंद ने गांधीजी की तरह अन्याय का विरोध और न्याय का समर्थन किया। गांधी जी के शब्द दोहराते हुए उन्होंने एक स्थल पर कहलाया है – *'अन्याय करना जितना बड़ा पाप है, उतना ही बड़ा अन्याय सहना है।'* अछूत किसान, मजदूर उचित नेतृत्व पाकर अन्याय का विरोध करते हैं और न्याय की मांग करते हैं। गांधीजी अन्याय का विरोध करने में अहिंसा के समर्थक थे और उसका त्याग बुरा मानते थे। उन्होंने समरकान्त से कहलाया है – *"आप अनीति पर अनीति से नहीं, नीति से विजय पा सकते हैं।"*

गांधी जी को हृदय परिवर्तन में विश्वास था। प्रेमचंद ने उनके इस सिद्धांत को स्वीकार करते हुए कहा है – *"मैं गांधीवादी नहीं हूँ, केवल गांधी के हृदय परिवर्तन में विश्वास करता हूँ।"* **'कर्मभूमि'** में सत्यान्वेषक अमर अपने पिता का हृदय परिवर्तन करने में सफल होता है। वह गांधी की तरह इस बात में विश्वास करता है – *"इंसान कितना ही हैवान हो जाय, उसमें कुछ-न-कुछ आदमीयत रहती ही है। आदमीयत अगर जाग सकती है, तो ग्लानि से या पश्चाताप से।"*

सैद्धांतिक पक्षों के अतिरिक्त **'कर्मभूमि'** में प्रेमचंद ने गांधी के व्यवहारिक पक्षों को खास तौर पर शामिल किया है। गांधी ने तत्कालीन परिवेश में सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक – सभी क्षेत्रों में व्याप्त दासता से देश को मुक्त कराने के लिए अठारह-सूत्री रचनात्मक कार्यक्रम बनाया जिनमें से अधिकांश चीजों को प्रेमचंद ने इस उपन्यास में शामिल किया है। गांधीजी ने भारत की सुख-शांति के लिए हिन्दू-मुस्लिम एकता को आवश्यक माना है। अमर-सलीम और सलीम समरकान्त का सम्बन्ध उन दोनों की एकता के सूचक है। गांधीजी ने अस्पृश्यता का निवारण के लिए आंदोलन भी किए और हरिजनों की बस्ती में रहकर तथा उनका कार्य करके उन्हें ऊँचा उठाने की चेष्टा की। प्रस्तुत उपन्यास में अछूतोद्धार का विस्तृत रूप में वर्णन हुआ है। अमर अछूतों की बस्ती में जाकर रहता है। प्रो. शान्तिकुमार और सुखदा अछूतों को मंदिर-प्रवेश का अधिकार अहिंसक आन्दोलन द्वारा दिलाने में समर्थ होते हैं। अछूतों में मद्यपान निषेध के लिए भी जागरूकता पैदा करने की कोशिश की जाती है। अमरकांत का चरखा कातना और खादी बेचना गांधीवादी कार्यक्रम के अंग हैं।

गांधीजी की तरह अमर चरखे को आत्मशुद्धि का एक साधन मानता है। गाँव की सफाई को उन्होंने आवश्यक माना है। ऐसी शिक्षा का इसमें समर्थन किया गया है जिसमें मानसिक और शारीरिक दोनों ही शक्ति का विकास हो।

गांधीजी ने आर्थिक समानता और मजदूरों एवं किसानों के संगठन पर बल दिया। जिस समाज में गरीबों के लिए स्थान न हो वह उस घर की तरह है जिसकी बुनियाद न हो। उपन्यास में प्रो. शान्तिकुमार के शब्दों में – *" मानवता हमेशा कुचली नहीं जा सकती। ममता जीवन का तत्त्व है। यही एक दशा है जो समाज को स्थिर रख सकती है। "* गांधी स्त्री को सम्मान की दृष्टि से देखते थे। प्रेमचंद ने भी नारी के प्रति असीम श्रद्धा प्रकट की है। उसे वात्सल्य, त्याग और प्रेम की देवी सृष्टि के विकास क्रम में पुरुष से आगे माना है। **'कर्मभूमि'** की देवियाँ तथाकथित पुरुष कर्म में पुरुष से कहीं आगे हैं। वे घर की सुख शांति भी हैं और समाज-सेविका भी। पुरुषों के समकक्ष होने की पूर्ण सामर्थ्य रखती हैं। ऐसी देवियों के दर्शन कर अमर उनके प्रति श्रद्धा से झुक जाता है।

गांधी भारतीय दर्शन और संस्कृति के पूजक थे। वे पाश्चात्य-संस्कृति को देश के लिए ही नहीं पश्चिम के लिए भी घातक समझते थे। प्रेमचंद ने भी सांस्कृतिक चेतना को महत्वपूर्ण माना है। उन्होंने भारतीय संस्कृति की सराहना इसीलिए की है कि वह ईश्वर-निष्ठा और मानवता पर आधारित है। स्त्री के पश्चिमी आदर्श, पाश्चात्य-शिक्षा प्रणाली की उन्होंने निंदा की है क्योंकि उनका आधार स्वार्थपरता और लोलुपता है। सेठ जी कहते हैं – *"हम अपनी पुरानी संस्कृति को भूल बैठे हैं। वह आत्म-प्रधान संस्कृति थी। जब तक ईश्वर की दया न होगी इसका पुनर्विकास न होगा और जब तक उसका पुनर्विकास न होगा हमलोग कुछ नहीं कर सकते। "*

कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि गांधीवाद के व्यवहारिक और सैद्धांतिक विचार और साधना ने प्रेमचंद को इतना अधिक प्रभावित किया है कि उनके निर्वाह का मोह 'कर्मभूमि' में ही नहीं अन्य उपन्यासों में भी नहीं छोड़ सके हैं। 'कर्मभूमि' गांधीवादी विचार और गांधी-युग की स्पष्ट झांकी है। इसमें गांधीवाद के प्रायः सभी सैद्धांतिक और व्यावहारिक पक्ष को दिखाने का प्रयास किया गया है और इस कार्य में प्रेमचंद को पर्याप्त सफलता भी मिली है।

- **कर्मभूमि के मुख्य चरित्र**

उपन्यास में पात्र-नियोजन अथवा चरित्र-चित्रण का विशेष महत्व है। उपन्यासकार जिन घटनाओं या विचारों को अभिव्यक्त करना चाहता है उन्हें मूर्त रूप देने के लिए पात्रों को ही माध्यम बनाता है। उपन्यासकार अपने कथानक को समुचित विकास देने के लिए पात्रों की योजना करता है, उसे गढ़ता है। जीवन के विविध क्षेत्रों से गृहीत ये पात्र स्वाभाविक एवं गुण-दोषों से युक्त होते हैं। गतिशील जीवन की भांति पात्र भी गतिशील होते हैं और उनके चरित्र में भी परिवर्तन और विकास होते रहते हैं। 'कर्मभूमि' में भी हम ऐसे विविध पात्रों की योजना देख सकते हैं। इसमें समरकान्त और धनीराम जैसे पिता भी हैं और अमरकांत, सलीम जैसे पुत्र भी। सुखदा जैसी भोग-विलासिनी पत्नी भी है और सकीना जैसी त्यागी प्रेमिका भी। यह विभिन्नता केवल स्वाभाव की ही नहीं है वरन जाति, धर्म, स्थान आदि की भी है। उपन्यास के सभी प्रमुख और अन्य पात्रों के चारित्रिक वैशिष्ट्य पर यहाँ हम चर्चा करेंगे।

क्या आप जानते हैं ?

प्रेमचंद ने 'मोहन भवनानी' की 'अजंता सिनेटोन कंपनी' में कहानी-लेखक की नौकरी भी की। 1934 में प्रदर्शित 'मजदूर' नामक फिल्म की कथा लिखी और कंट्रेक्ट की साल भर की अवधि पूरी किये बिना ही दो महीने का वेतन छोड़कर बनारस भाग आये। बंबई का और उससे भी ज़्यादा वहाँ की फिल्मी दुनिया का हवा-पानी उन्हें रास नहीं आया। हालाँकि बाद में उनकी कई रचनाओं पर सफल-असफल फिल्मों का निर्माण हुआ, जिनमें हीरा-मोती, गबन, गोदान, शतरंज के खिलाड़ी आदि शामिल हैं।

अमरकांत

अमरकांत 'कर्मभूमि' का सबसे प्रमुख पात्र है। उपन्यास के शुरू में उसे स्कूल की फीस न दे पाने वाले एक विद्यार्थी के रूप में और आगे चलकर धीरे-धीरे उपन्यास की सभी घटनाओं से सम्बद्ध दिखाया गया है। कथा के अंत में अपने उद्देश्यों की प्राप्ति में उसको सफल दिखाकर कथानक को समाप्त कर दिया गया है। इस प्रकार उपन्यास के कथानक का सम्पूर्ण ताना-बाना उसी के चारों ओर गुंथा रहा है। उसको नायक के रूप में प्रस्तुत किया गया है। उसके व्यक्तित्व के गुण-दोषों का वर्णन करते हुए अंत में उसे एक आदर्श व्यक्ति के रूप में प्रतिष्ठित किया गया है।

अमरकांत में समाज सुधार की भावना प्रबल थी। संपन्न परिवार में जन्म लेने पर भी वह सादा जीवन उच्च विचार के सिद्धांतों में जीने वाला व्यक्ति है। सकीना से प्रेम करने के कारण पठानिन से तिरस्कृत होकर जब वह काशी छोड़ अज्ञातवास करने चला जाता है,

उस समय उसकी बाह्य वेशभूषा भी एक सामान्य व्यक्ति जैसी चित्रित की गयी है। उसके बारे में प्रेमचंद ने लिखा है – *"अमरकांत एक साँवला-सा, दुबला-पतला युवक, मोटा, कुरता, ऊँची धोती और चमरौंधे जूते पहने, कंधे पर लुटिया-डोर रखे, बगल में एक पोटली दबाए हुए था।"*

अमरकांत की माता का देहांत उसकी अबोधावस्था में ही हो गया था। विमाता ने भी उसकी उपेक्षा की। विवाह के कुछ वर्षों बाद उसकी पत्नी सुखदा की विधवा माँ रेणुका देवी जब काशी में आकर रहने लगी तब उस समय अमरकांत को उससे माता जैसा मृदुल आत्मीय व्यवहार पाकर संतोष हुआ था, किन्तु सकीना के प्रेम में उलझने के कारण नगर छोड़कर भागने से वह आधार भी छिन गया। पिता की विचारधारा से अमरकांत सहमत न था। वह अपनी पत्नी सुखदा के विचारों से भी सहमत न था। अतः पारिवारिक स्नेह की प्राप्ति न होने के कारण अमरकांत की प्रवृत्ति विद्रोह की ओर हो गयी थी।

अमरकांत में सामाजिक न्याय की भावना भी थी। अन्याय के प्रति विद्रोह उसके स्वभाव में था, चाहे मुन्नी भिखारिन की घटना हो या गाँव के जमींदार महंतजी द्वारा किसानों को लगान में छूट देने में आनाकानी का प्रसंग। समाज सुधार के कार्यों में भी अमरकांत की रूचि प्रारंभ से रही है। शोषित और उपेक्षितों के प्रति उसके हृदय में सच्ची सहानुभूति है और उनके उद्धार के लिए वह सरकार से टक्कर लेने में संकोच नहीं करता। इसी निश्छल भावना के कारण वह जहाँ भी जाता है वहां के पीड़ित और उपेक्षित व्यक्ति उसे अपना नेता बनाकर उसके पीछे चलने लगता है।

अमरकांत को सत्य बोलनेवाले लोगों से प्रेम है और पाखण्ड एवं आडम्बर में विश्वास करनेवालों से घृणा थी। अमरकांत कहता है – *"मैं जात-पाँत नहीं मानता, माताजी। जो सच्चा है, वह चमार भी हो, आदर के योग्य है, जो दगाबाज, झूठा हो, वह ब्राह्मण भी हो तो आदर के योग्य नहीं।"* अमरकान्त गांधीवादी सिद्धांतों का अनुयायी था। सादा जीवन, अन्याय का विरोध, समाज-सेवा, हरिजनों का उद्धार, मानवीयता की भावना आदि उसके जीवन के मूल तत्व हैं।

अमरकांत के जीवन में कई स्थलों पर नैतिक शिथिलता और समझौते का भी दर्शन होता है। कभी-कभी उसने झूठ का भी सहारा लिया है। पठानिन द्वारा सकीना से बातचीत करते हुए पकडे जाने पर वह पठानिन से कहता है कि वह उससे माफ़ी मांगने आया है जबकि सच्चाई यह है कि वह बुढिया की अनुपस्थिति में सकीना से विवाह की बात करने आया था।

अमरकांत उत्तरोत्तर विकास की सीढ़ी पर अग्रसर होता हुआ अपने उद्दिष्ट पथ तक पहुँचने में सफल होता है। वह घर के संकुचित दायरे को तोडकर जब समाज के विशाल क्षेत्र में पदार्पण करता है तो उमंग और उत्साह से भर देता है। सेवा-त्याग का सन्देश लिए वह न्याय की मशाल जलाता है। अन्याय, अन्धकार को दूर करने का प्रयास करता है। उसको मिटाने के लिए वह हर संभव प्रयास करता है और सफलता भी प्राप्त करता है। उसका चरित्र उस विशाल तपस्वी आत्मा की भांति है जो भोग के बंधनों में बंधकर नहीं रहती है, वरन आत्मा का विकास करती है।

समग्र रूप में कहा जा सकता है कि अमरकांत एक आदर्श नवयुवक के रूप में चित्रित किया गया है। उसमें मानव-सुलभ दुर्बलताएं भी हैं, किन्तु उनकी तुलना में देश-प्रेम की भावना, अछूतोद्धार का प्रयत्न, समाज-सुधार, त्याग, कर्म में विश्वास आदि उनके चरित्र की महत्वपूर्ण विशेषता है।

समरकान्त

अमरकांत के पिता समरकान्त नगर के धनी साहूकारों में थे। हालाँकि जब उनके पिता का निधन हुआ था तब उनके पास रहने का भी ढंग का प्रबंध न था। यह सब समरकान्त के श्रम का ही फल है कि उन्होंने झोंपड़ी के स्थान पर लाखों की संपत्ति जमा कर ली। लेखक उनके परिश्रम एवं चातुर्य का परिचय देते हुए लिखता है – *"पहले उनकी एक छोटी सी हल्दी की आढ़त थी। हल्दी से गुड और चावल की बारी आयी। तीन बरस तक लगातार उनके व्यापार का क्षेत्र बढ़ता ही गया। अब आढतें बंद कर दी थीं। केवल लेन-देन करते थे। कोई महाजन रुपये न दे, उसे वह बेखटके दे देते और वसूल कर लेते। उन्हें आश्चर्य होता था, किसी के रुपये मारे कैसे जाते हैं। ऐसा मेहनती आदमी भी कम होगा।"*

समरकान्त एक कुशल व्यापारी हैं और धन कामने की कला जानते हैं। पिता-पुत्र में वैचारिक असहमति है। परिस्थितियों से प्रभावित होकर अंत में समरकान्त भी अपने सिद्धांतों को छोड़कर समाजसेवा के मार्ग को अपनाता है। इस तरह उनका चरित्र गतिशील रहा है। व्यवसाय में बिना झूठ बोले काम नहीं चलता, समरकान्त भी झूठ और शोषण के द्वारा धन एकत्रित करने के पक्ष में थे। काले खां से चोरी के माल न खरीदने के कारण अमरकांत को उसके पिता डांटते हैं। इसी तरह उपन्यास के उत्तरार्द्ध में जब गरीबों के मकान बनाने के लिए कमेटी को जमीन नहीं मिलती है तब भी वे डॉ. शांतिकुमार को अधिकारियों को रिश्वत देकर जमीन लेने का परामर्श देते हैं। किन्तु लाला समरकान्त अपने इस कुत्सित व्यवहार के प्रति लज्जित भी हैं। गाँव में अमरकांत के बंदी हो जाने पर जब वे उसके मित्र

अफसर सलीम से मिलते हैं तब इन शब्दों में अपने कार्यों का उन्होंने प्रायश्चित किया है – *"बहू जेल में है, लड़का जेल में है, शायद लड़की भी जेल की तैयारी कर रही है। और मैं चैन से खाता-पीता हूँ। आराम से सोता हूँ। मेरी औलाद मेरे पापों का प्रायश्चित कर रही है। मैंने गरीबों का कितना खून चूसा है, जवानी में समझ आ गयी होती तो कुछ अपना सुधार करता।"*

लाला समरकान्त झूठ बोलने और बेईमानी करने वाले व्यक्ति होने के बावजूद ईश्वर में आस्था रखते हैं। वे नित्य प्रति भगवान् की आरती करते हैं, किन्तु उनके हृदय में संकीर्णता ने इतनी जगह बना राखी है कि वे अछूतों को उस ठाकुरद्वारे में जूते उतरने वाले स्थान के समीप बैठकर भी कथा नहीं सुनने देते। वे वहां से उन्हें पिटवाकर भगा देते हैं और उनकी भीड़ पर गोली चलवा देते हैं। वास्तव में उनमें मानवमात्र के प्रति सहानुभूति नहीं है, केवल धर्म का दिखावा है। पिता-पुत्र में वैचारिक विरोध और अनबन के बीच पुत्र के सुख से वंचित लाला समरकान्त के जीवन में कठोरता स्वाभाविक है। अमरकांत के शहर छोड़कर भाग जाने पर वे कहते हैं – *"मैंने तो बेटे का सुख ही नहीं जाना। तब भी जलाता था, अब भी जला रहा है।"*

उपन्यास में वर्णित विभिन्न कथा-प्रसंगों से स्पष्ट है कि लाला समरकान्त के हृदय की कठोरता आरोपित है। मूल रूप से उनका हृदय भी पुत्र के प्रति स्नेह से युक्त है। जब सकीना के प्रेम में उलझकर बदनामी के डर से अमरकांत नगर छोड़कर जाने लगता है उस समय समरकान्त उनके सम्मुख रुकने के लिए गिडगिडाते हैं। बहुत प्रार्थना करने पर भी अमरकांत द्वारा न मानने पर वे पुत्र के प्रति अपने स्नेह का परिचय देते हुए कहते हैं – *"चलते-चलते घाव पर नमक न छिड़को लल्लू। बाप का हृदय नहीं मानता। कम-से-कम इतना तो करना कि कभी-कभी पत्र लिखते रहना। तुम मेरा मुँह न देखना, चाहो लेकिन मुझे कभी-कभी आने-जाने से न रोकना। जहाँ रहो, सुखी रहो, यही मेरा आशीर्वाद है।"*

प्रेमचंद के 133 वें जयन्ती उत्सव से सम्बंधित एन.डी.टी.वी. की विशेष रिपोर्ट देखने के लिए क्लिक करें –
https://www.youtube.com/watch?v=GkjWRXfrDOU

कठोर हृदय दिखनेवाले लाला समरकान्त के चरित्र के कुछ कोमल पक्ष भी हैं। वे अपने एक कर्मचारी की विधवा पत्नी पठानिन को नियमित रूप से पांच रुपये मासिक देते रहते हैं। आगे चलकर यह राशि बढ़कर पच्चीस रुपये प्रति मास कर दी गयी। जनता के लिए ठाकुरद्वारा बनवाते है और अंत में सुखदा का साहस देखकर अछूतों के लिए भी उस मंदिर का प्रवेश-द्वार खुलवा देते हैं। गरीबों के मकान बनवाने के लिए वे लाखों रुपये देने को तत्पर हो जाते हैं और उत्तर दिशा के पर्वतीय गांव में अमरकांत की गिरफ्तारी की सूचना पाकर वहाँ जाते हैं और अधिकारियों की मार से घायल अछूतों को एक हजार रूपया सेवा-सुश्रुषा के लिए दान दे आते हैं।

इस तरह लाला समरकान्त का चरित्र 'कर्मभूमि' में परिवर्तनशील रहा है। वे उपन्यास के अंत में धार्मिक पाखण्ड, धन के प्रति निर्मम आसक्ति और समाज-विरोधी विचारधारा का त्याग करके अपने पुत्र-पुत्री और पुत्रवधू के विचारों से सहमत होकर जन-आन्दोलन में सक्रिय भाग लेने लगते हैं तथा उनकी सहानुभूति में जोशीला भाषण देते हुए स्वयं को गिरफ्तार करवा कर मानो अपने पूर्व-कृत्यों का प्रायश्चित करते हैं। सद्वृत्तियों का सूर्योदय दुर्वृत्तियों के गहन अन्धकार को चीर देता है और तब जो प्रकाश दिखाई देता है, वह बहुत उज्ज्वल और सुस्पष्ट होता है। समरकान्त के जीवन में भी इसी प्रकार की सद्वृत्ति का विकास हुआ।

सुखदा

प्रेमचंद ने सुखदा का चरित्र-चित्रण बड़ी ही कुशलता के साथ किया है। आरम्भ में वह एक विलासप्रिय सामान्य नारी के रूप में सामने आती है और पति को राजनैतिक कार्यों में भाग लेने से रोकती है। परन्तु पति के घर छोड़कर चले जाने पर उसमें अभूतपूर्व परिवर्तन होता है। वह न केवल राजनैतिक कार्यों में भाग लेना ही आरम्भ करती है वरन विभिन्न आंदोलनों का नेतृत्व करती है और क्रियाशीलता में सभी कार्यकर्ताओं को पीछे छोड़ जाती है। स्वयं डॉक्टर शान्तिकुमार को उसका अनुकरण करना पड़ता है। अछूतों के मंदिर-प्रवेश के लिए तथा मजदूरों के लिए सस्ते मकानों को बनवाने के लिए किये जाने वाले आन्दोलनों में वह अद्भुत कर्मठता दिखाती है और अंत में सफलता प्राप्त करके ही रहती है। परन्तु अपने राजनैतिक विचारों में वह अपने पति के समान सहिष्णु प्रवृत्ति की नहीं है। वह उग्र क्रान्तिकारिणी है और हँसते-हँसते जेल जाती है। लाला समरकान्त उसकी जमानत देना चाहते हैं परन्तु वह जेल से बाहर आने से मना कर देती है।

उसमें उदारता भी दिखाई गई है और जब अमर सकीना के यहाँ आने-जाने लगा है तो वह स्वयं भी सकीना के पास आने-जाने लगती है। वस्तुतः जीवन में संपर्क में आनेवाले सभी व्यक्तियों के प्रति उसके हृदय में उदारता और सहानुभूति के भाव लक्षित होते हैं।

सुखदा का प्रारंभिक जीवन पैसे पर जान देनेवाली स्त्री के जीवन की तरह है। धन उसके जीवन का महत्वपूर्ण हिस्सा है। वह अमरकांत से कहती है – *"मनस्वी, वीर पुरुषों ने सदैव लक्ष्मी की उपासना की है। संसार को पुरुषार्थियों ने ही भोगा है और हमेशा भोगेंगे। न्याय गृहस्थों के लिए नहीं, संन्यासियों के लिए है।" वह बार-बार अमर को धन का महत्व समझाने का प्रयत्न करती है। प्रेमचंद ने लिखा है – "भोग-विलास को जीवन की सबसे मूल्यवान वस्तु समझती थी और उसे हृदय से लगाये रहना चाहती थी। अमरकांत को वह घर के काम-काज की ओर खींचने का प्रयास करती थी। कभी समझाती थी, कभी रूठती थी, कभी बिगड़ती थी।"*

सुखदा अपने दायित्व और कर्तव्यों के प्रति सचेत स्त्री थी। उसमें सेवा का बीज है। समरकान्त की अस्वस्थता की सूचना पाकर वह उनकी सेवा-सुश्रुषा करती है। प्रतिदिन अपने घर का कार्य करने के बाद वह उन्हें भोजन बनाकर खिलाती है और उनका हर प्रकार से ध्यान रखती है। वह प्रोफ़ेसर शांति कुमार के सम्मुख स्पष्टीकरण देते हुए कहती है – *"वह मुझे विलासिनी समझते थे, पर मैं कभी विलास की लौंडी नहीं रही। हाँ, दादाजी को रुष्ट नहीं करना चाहती थी। यही बुराई मुझमें थी।"*

सुखदा एक चतुर स्त्री है जो अपने तर्कों से समरकान्त को भी पराजित कर देती है। अमर की कई दलीलों को भी वह अपने तर्क से ख़ारिज कर देती है और कई बार अपनी बात मनवाने में समर्थ रहती है। यही नहीं वह एक स्वाभिमानी स्त्री है जो अपने स्वाभिमान की रक्षा करने के लिए अनेक प्रकार के कष्ट झेलने को भी तैयार है। अमर से सुखदा कहती है – *"माता के साथ क्यों रहूँ? मैं किसी की आश्रित नहीं रह सकती। मेरा दुःख-सुख तुम्हारे साथ है। .... जब एक दिन हमें अपनी झोपडी बनानी है तो क्यों न अभी से हाथ लगा दें। तुम कुएँ से पानी लाना, मैं चौका बरतन कर लूंगी।"* उसके इस कथन में उसके स्वाभिमान और स्वावलंबन की प्रबल भावना दिखाई देती है।

अमर के घर छोड़कर चले जाने को वह विश्वासघात मानती है तथा उसका मन अमर के प्रति उपेक्षा से भर जाता है। इस परिस्थिति में उसका आत्माभिमान बढ़ जाता है, सुखदा ने झुकाना नहीं सीखा। वह अमर को पत्र नहीं लिखती है। वह पिता से अलग होने के बाद अमर की इच्छा के विरुद्ध भी बालिका विद्यालय में ५० रुपये पर नौकरी कर लेती है। पुरुष का विश्वासघात उसके मन में क्षोभ उत्पन्न करता है और इसी कारण सकीना के प्रति उसकी सहानुभूति रहती है। वह सकीना को अपने से अधिक दुखी समझती है। वह सोचती है – *"उसकी कितनी बदनामी हुई, और अब बेचारी उस निर्दय के नाम को रो रही है। वह सारा उन्मान जाता रहा। ऐसे छिछोरों का एतबार ही क्या।"* वह समय-समय पर सकीना से भेंट करती रहती है। सकीना उसके लिए महत्व की पात्र बन जाती है क्योंकि उसी से वह त्याग, प्रेम और सेवा का पाठ सीखती है। अपनी भूल का आभास उसे होता है और वह उसी पथ को ग्रहण करती है, जो पथ अमर ने ग्रहण किया।

सामाजिक कार्यों में सुखदा की प्रारंभ से ही रूचि रही है। इसका संकेत मुन्नी के प्रसंग में उसके विकल हो जाने से मिलता है। वह उसके मुकद्दमे के लिए रुपये का भी प्रबंध करती है। अमर के जाने के बाद तो वह खुलकर सामाजिक जीवन में भाग लेने लगती है। वह अछूतोद्धर में शान्तिकुमार की सहायिका बनती है और उन्हें मंदिर प्रवेश का अधिकार दिलाती है। गरीब मजदूरों के रहने के लिए वह मकान की योजना बनाती है और क्रियान्वित करने की दिशा में प्रयत्न करती है। अंत में वह निःस्वार्थ कर्म में विश्वास करती है। हर एक शुभ कार्य में वह ईश्वर का महत्वपूर्ण हाथ मानती है।

सुखदा का चरित्र इस तथ्य को प्रकट करता है कि श्रद्धा, प्रेम, सम्मान, धन से नहीं बल्कि सेवा से ही मिल सकता है। अपनी सेवा-भावना के कारण ही घर और बाहर दोनों के दायित्व को वह भलीभांति निभा पाती है। परिवार के लिए वह एक ऐसी स्त्री का आदर्श बनती है जो आज्ञाकारिणी पुत्रवधू भी है, स्नेही भाभी भी है और पति की प्रेरणा भी है। इसके साथ ही और इन सबसे ऊपर वह एक जनसेविका भी है। वह 'स्व' के तल से ऊपर उठकर 'पर' के तल तक पहुँचने वाली एक महान नारी के रूप में सामने आती है।

सलीम

सलीम अमर का सच्चा स्नेही मित्र है। दोनों की मित्रता का आरम्भ पास-पास बैठने के कारण और दोनों के शायरी के शौक के कारण हुआ। बचपन की यह मित्रता युवावस्था में और गहरी हो जाती है। स्कूल में फीस जमा करने में भी वह अमर की मदद करता है और समय-समय पर वह अमर को सांत्वना भी प्रदान करता है। यही नहीं वह अमर को सकीना के प्रेम की मृग-मरीचिका में भटकने से रोकने की चेष्टा करता है। परन्तु उसके समझाने पर भी जब अमर अपनी ज़िद पर अटल रहता है और घर छोड़कर चले जाने का संकेत देता है तो सलीम चुपके से उसके पिता समरकान्त को बुला लेता है। अफसर के रूप में जब उसे अमरकांत को गिरफ्तार करना पड़ता है तो वह अपने हृदय की पीड़ा को अभिव्यक्त करते हुए सकीना को पत्र लिखता है – *"मेरे दिल पर इस वक्त जो गुजर रही है, वह मैं तुमसे बयां नहीं कर सकता। अपने जिगर पर खंजर चलाते हुए भी मुझे इसमें ज्यादा दर्द न होता। मैं ख़ून के आंसू रो रहा हूँ।"*

सलीम व्यावहारिक बुद्धि से काम करता है, आदर्शों में न बहता है, न आस्था रखता है। वह मजे से जीवन जीना चाहता है, व्यर्थ में ही आदर्शों के पीछे जीवन को संकट में डालने में कोई बुद्धिमानी नहीं समझता है। अमर के सुधारवादी दृष्टिकोण को वह पागलपन कहता है और प्रो. शान्तिकुमार की सुधारवादी शाला को मदारी का तमाशा, जहाँ जादू की लकड़ी छुआ देने से ही मिट्टी सोना बन जाती है की बात कहता है। वह अमर से कहता भी है - *"तुम लोग क्यों बैठे-बैठाये अपनी जान जहमत में डालने की फिक्र किया करते हो, गोया जिन्दगी हजार-दो-हजार साल की है। ... मैं तो इसे पागलपन कहता हूँ।"*

वह मुस्लिम भेदभाव को भी व्यवहारिक दृष्टि से देखता है और उनके एकता के स्वप्न देखनेवालों को कोरा आदर्शवादी मानता है। प्रो. शान्तिकुमार से वह इसलिए चिढ़ता है कि 'कौम के नाम पर वह जान देते हैं पर जबान से।' अमर से भी यही बात कहता है – *"तुम्हारे खयालात तकरीरों में सुन चुका हूँ, अखबारों में पढ़ चुका हूँ। ऐसे खयालात बहुत पाकीज़ा, दुनियाँ में इन्कलाब पैदा करने वाले हैं, कितनों ही ने इन्हें जाहिर करके नामवरी हासिल की है। लेकिन इल्मी बहस दूसरी चीज है, उस पर अमल करना जरुरी है।"*

सलीम स्वभाव से अत्यंत ही विनोदी है, हंसी-मजाक उसकी स्वभावगत विशेषता है। लेकिन समय पर उसके उग्र स्वभाव का भी दर्शन होता है। गाँव में मिले तीन बदमाश गोरों को कठोर सजा देने की सोचता है चाहे इसके लिए उसे फांसी ही क्यों न चढ़ना पड़े।

पद का मद विवेकशील को भी भटका देता है, फिर सलीम जैसा मनमौजी और शान-शौकत की इच्छा रखने वाले की तो बात ही क्या? एक तो उसकी रूचि जनहित में पहले ही वैसी नहीं थी, फिर ऑफिसर बनने पर उनका ध्यान रखना तो और भी असंभव था। छात्रावस्था में किए गए उनके जन-सेवा के कार्य उसकी अन्तःप्रेरणा से उद्‌भूत नहीं, वरन प्रो. शान्तिकुमार और अमरकांत की संगति के परिणामस्वरूप हैं। हाँ, जनसेवा उसका स्वभाव नहीं है तो अत्याचार करना भी उसका विचार नहीं है। अतः उसके द्वारा किसानों पर जो अत्याचार होते, वे पद के मद में, परिस्थिति में पड़कर ही किए जाते हैं। लगानबन्दी आन्दोलन को वह बड़ी निर्ममता से कुचलता है क्योंकि सरकारी आज्ञा का पालन जरुरी है। वह समरकान्त के सम्मुख अपनी मजबूरी को प्रकट करते हुए कहता है – *"मेरी बदनसीबी है कि यहाँ आते ही मुझे यह सब करना पड़ा, जिससे मुझे नफ़रत थी।"*

परन्तु संगति के प्रभाव के कारण ऑफिसर बनने के बाद भी सलीम का मन इतना काला भी नहीं हुआ है कि इस पर कोई दूसरा रंग ही न चढ़ सके। समरकान्त की प्रताड़ना और स्नेहपूर्ण प्रेरणा सलीम को शीघ्र ही सुपथ पर ले आती है। वह मानने लगता है कि प्रजा सेवा ही अधिकारियों का उद्देश्य होना चाहिए, अन्यथा उसे पद त्याग देना चाहिए। प्रथम कर्त्तव्य पालन में स्वयं को असमर्थ पाकर वह अपने पद से इस्तीफ़ा दे देता है। इस तरह वह अपने मित्र के मार्ग का अनुसरण कर धन्य हो जाता है।

प्रेमचंद की कहानी पर आधारित फिल्म सद्गति देखने के लिए इस लिंक को क्लिक करें –
https://www.youtube.com/watch?v=R4vBUd5gQKg

सलीम के नारीविषयक दृष्टिकोण का परीक्षण भी आवश्यक है। सलीम जीवन के प्रारंभ में नारी-प्रेम की गंभीरता को नहीं समझ पाता है। वह तो नारी को केवल दिलचस्पी की चीज मनता है। आधुनिक नवयुवकों की सी दृष्टि उसकी भी है जो रुमालों का मूल्य उसकी कढाई से नहीं वरन बनाने वाले की दृष्टि से मापता है।
सलीम व्यवहार-कुशल, जिंदादिल और मस्त शेरो-शायरी का शौक़ीन युवक है जो पाठक को प्रारंभ से अंत तक अपनी सजीवता के कारण बांधे रहती है। अधिकार के मद में डूबी उसकी मानवता समरकान्त की प्रेरणा से पुनः जाग्रत होती है और तब राष्ट्रीय-भावनाओं से ओत-प्रोत उसका उज्ज्वल चरित्र हमें अधिक आकर्षित करता है।

अन्य चरित्र

उपरोक्त प्रमुख पात्रों के अतिरिक्त इस उपन्यास में अनेक ऐसे पात्र हैं जो अत्यंत ही महत्वपूर्ण हैं तथा प्रमुख पात्रो के चारित्रिक विकास में सहायक होने के साथ-साथ कथा के विकास में भी महत्वपूर्ण योगदान देते हैं। इनमें सकीना, शान्तिकुमार, नैना, रेणुका, मुन्नी, काले खां आदि प्रमुख हैं। सकीना के जरिये प्रेमचंद ने अपने नारी संबंधी आदर्श को प्रस्तुत किया है। वहीं शांतिकुमार की चारित्रिक विशेषताएं उनके मानव-सुलभ स्वभाव की द्योतक है। प्रेमचंद के शब्दों में – *"वह विवाह के कट्टर विरोधी, स्वतंत्रता-प्रेम के कट्टर भक्त, बहुत ही प्रसन्न मुख, सुहृदय, सेवाशील व्यक्ति थे। राजनैतिक आन्दोलन में खूब भाग लेते, पर गुप्त रूप से। खुले मैदान में न आते, हाँ सामाजिक क्षेत्र में खूब गरजते थे।"*

नैना बहन के स्नेह का आदर्श है। लेखक लिखता है – *"अमरकांत के एकांत जीवन में नैना ही स्नेह और सांत्वना की वस्तु थी। अपना सुख-दुःख, अपनी विजय और पराजय, अपने मंसूबे और इरादे वह उसी से कहा करता था।"* कथा के अंतिम हिस्से में नैना का व्यापक महत्व सामने आता है। नैना मजदूरों की हड़ताल का सञ्चालन करके अपनी अद्भुत नेतृत्व शक्ति का परिचय देती है। अथाह जनसमूह उनके पीछे सागर की तरह उमड़ता हुआ म्युनिसिपैलिटी के दफ्तर की ओर चलता है। मार्ग में वह क्रुद्ध पति का शिकार बनती है। अपने प्राणों की बलि देकर वह शोषकों के मन में शोषितों के प्रति सहानुभूति जाग्रत करती है। उसका उत्सर्ग ही आन्दोलन को सफलता प्रदान करता है और वह मर कर भी अमर हो जाती है। उसी के प्राणों से यज्ञ की पूर्णाहुति होती है। नैना का अंत करुणाजनक है जो मानव-मन को शोक संतप्त कर देता है, पर जीवन का इससे शुभ उपयोग और हो भी क्या सकता है।

उपन्यास में सर्वप्रथम मुन्नी से हमारा परिचय एक हत्यारिन भिखारिणी के रूप में होता है। वह गोरों की हत्या कर देती है क्योंकि उन्होंने उसके सतीत्व को भंग किया था। वह जनता की सहानुभूति और श्रद्धा का पात्र बनती है। मुन्नी को अपना जीवन 'पिंजरे में सूखे दाने' की तरह लगता है। विधना ने उससे उसका पति छीना, पुत्र छीना और अंत में वह आशा-दीपक अमर भी दूर होता हुआ लगा। लेकिन केवल एक विचार कि अमर उसी के ग्राम में रहेगा, उसको कली की तरह खिला देता है।

रेणुका देवी विधवा की माँ है। रूप और अवस्था से वह वृद्ध नहीं है, विचार और व्यवहार ने उन्हें वृद्धा बना दिया है। विधवा का जीवन ताप का जीवन है, लोकमत उसके विरुद्ध उसे नहीं देख सकता है। रेणुका के जीवन में भोग-विलास की वृत्ति का पूर्णतः लोप नहीं हुआ है, लेकिन लोक मर्यादा के कारण दान और व्रत का स्वांग उन्हें करना ही पड़ता है। धन संपत्ति का त्याग रेणुका को स्वार्थ के पद से हटाकर परमार्थ के पथ पर पहुंचा देता है। वह संकुचित मातृत्व से उठकर व्यापक मातृत्व के पद पर पहुँच जाती है, जिनका स्नेह पाकर जन-मन गद-गद और श्रद्धा से भर उठता है।

इस तरह कर्मभूमि के सभी पात्र अत्यंत ही प्रभावशाली और कथा के विकास में सहायक हैं। सभी पात्रों को उसके चारित्रिक वैशिष्ट्य के साथ प्रस्तुत करने में प्रेमचंद को पर्याप्त सफलता मिली है।

स्व-मूल्यांकन प्रश्नमाला

बहुवैकल्पिक प्रश्न

1. **अमरकांत की बहन का क्या नाम था ?**
   (क) **नैना** (ख) रेणुका (ग) सकीना (घ) इनमें से कोई नहीं ।
2. **मुन्नी भिखारिन पर क्या आरोप था?**
   (क) चोरी का (ख) **अंग्रेजों की हत्या का** (ग) देशद्रोह का (घ) साजिश और षडयंत्र का।
3. **अमरकांत ने घर छोड़ने के बाद कहाँ आश्रय लिया?**
   (क)प्रेमिका सकीना के घर (ख)सास रेणुका के घर (ग)**हरिद्वार में रैदासों की बस्ती में** (घ)दोस्त सलीम के घर।
4. **सकीना का विवाह किससे हुआ ?**
   (क) **सलीम से** (ख) अमरकांत से (ग) मनीराम से (घ) इनमें से किसी से नहीं।
5. **रेणुका देवी की संपत्ति दान से किसकी स्थापना की गयी ?**
   (क) अनाथालय की (ख) वृद्धाश्रम की (ग) रैन बसेरे की (घ) **सेवाश्रम ट्रस्ट की।**

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. **अमरकांत और सकीना के प्रेम संबंध का परीक्षण कीजिए।**
2. **सुखदा के प्रारंभिक स्वाभाव पर प्रकाश डालिए।**
3. **उपन्यास में नैना के महत्व पर चर्चा कीजिए।**
4. **सलीम के चारित्रिक वैशिष्ट्य का सोदाहरण परिचय दीजिए।**
5. **मुन्नी भिखारिन प्रसंग की सार्थकता का विवेचन कीजिए।**

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. उपन्यास के तत्वों के आधार पर 'कर्मभूमि' की समीक्षा कीजिए।
2. "उपन्यास मानव चरित्र का चित्र है" इस कथन के सन्दर्भ में 'कर्मभूमि' के चरित्रों का परीक्षण कीजिए।
3. 'कर्मभूमि' के परिप्रेक्ष्य में प्रेमचंद की रचनाशीलता पर गांधीवाद के प्रभाव का विश्लेषण कीजिए।
4. 'कर्मभूमि' उपन्यास में व्यक्त समस्याओं पर प्रकाश डालिए।
5. 'कर्मभूमि' के आधार पर तत्कालीन सामाजिक-राजनीतिक परिवेश को स्पष्ट कीजिए।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. उपन्यास की महान परंपरा, खगेन्द्र ठाकुर, स्वराज प्रकाशन, दिल्ली।
2. कथाकार मुंशी प्रेमचंद, डॉ. कृष्णदेव झारी, राष्ट्रीय हिन्दी साहित्य परिषद्, दिल्ली।
3. प्रेमचंद और उनकी कर्मभूमि, डॉ. प्रतिमा गुप्ता, अशोक प्रकाशन, दिल्ली
4. हिंदी उपन्यास की शिल्पविधि का विकास, डॉ. (श्रीमती) ओम शुक्ल, अनुसन्धान प्रकाशन, कानपुर।
5. कथाकार प्रेमचंद, डॉ. रामदरश मिश्र, डॉ. ज्ञानचंद गुप्त, (सं.) नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली।
6. आज का हिंदी उपन्यास, इंद्रनाथ मदान, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली।
7. उपन्यासकार प्रेमचंद, सुरेशचंद गुप्त, रमेशचंद गुप्त, (सं.) अशोक प्रकाशन, दिल्ली।
8. उपन्यास का शिल्प, गोपाल राय, बिहार हिंदी ग्रन्थ अकादमी, पटना।
9. प्रेमचंद और उनका युग, रामविलास शर्मा, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली।
10. प्रेमचंद के उपन्यासों का शिल्प-विधान, कमलकिशोर गोयनका, सरस्वती प्रेस, दिल्ली।